thearyasamaj.org

ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 27 जुलाई 2014 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 27 जुलाई 2014 से 02 अगस्त 2014

श्रा. शु. 01 ● वि० सं०–2071 ● वर्ष 79, अंक 118, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 191 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,115 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

आर्य समाज कोटा ने श्री पूनम सूरी का किया सम्मान

आर्य समाज का प्रचार प्रसार कर आमजन को यज्ञ के महत्व की जानकारी देकर उन्हें यज्ञ कार्यक्रमों से जोड़ें। उक्त विचार डी.ए.वी. कॉलेज प्रबन्ध कार्यसमिति के चैयरमेन श्री पूनम सूरी ने डी.ए.वी. स्कूल में आर्य समाज कोटा जिला सभा के प्रतिनिधिमण्डल से शिष्टाचार भेंट में कहे।

उन्होंने कहा कि डी.ए.वी विद्यालयों में आर्य संस्कारों को बढ़ावा देने के लिए डी.ए.वी स्कूलों के सभी प्राचार्यों एवं अध्यापकों को यज्ञ करने का प्रशिक्षण दिया गया है। राष्ट्रोत्थान में आर्य विचारधारा की महत्वपूर्ण भूमिका होगी।

प्रतिनिधिमंडल के रूप में जिला प्रधान अर्जुनदेव चड्ढा, जिलामंत्री कैलाश बाहेती, कोषाध्यक्ष जे.एस दुबे, पूर्व उपप्रधान रामप्रसाद याज्ञिक, डॉ वेदप्रकाश गुप्ता ने डी.ए.वी. स्कूल में आर्य शिरोमणि श्री पूनम सूरी जी को राजस्थानी साफा पहनाकर मोतियों की माला व गायत्री मंत्र से सुसज्जित रेशमी पटका पहनाकर स्वस्ति मंत्रोच्चार के साथ उनका सम्मान किया। श्री पूनम सूरी को जिला सभा की ओर से ओ३म् का स्मृति चिन्ह भेंट कर सम्मानित किया गया।

इस अवसर पर श्रीमती मणि सूरी, आर्य समाज के प्रतिनिधि व डी.ए.वी. के रीजनल डायरेक्टर डॉ. राजेश कुमार तथा एम.एल गोयल, प्रिंसीपल ए.के. लाल, प्रिंसीपल श्रीमती सरिता रंजन गौतम, कोटा, अशोक कुमार शर्मा, जयपुर, अन्जू उतरेजा गढ़ेपान आदि भी उपस्थित थे।

जिला प्रधान ने श्री पूनम सूरी को कोटा आर्य जिला सभा द्वारा किये जा रहे धार्मिक, आध्यात्मिक और सामाजिक कार्यों की जानकारी दी।

चड्ढा ने उन्हें बताया कि आर्य समाज के माध्यम से वेदप्रचार, नशामुक्ति, पर्यावरण सुधार, विभिन्न विद्यालयों में जाकर छात्रों को वैदिक संस्कार देना, निराश्रित सेवा, कुष्ठरोगी सेवा आदि अनेक जनकल्याण के कार्य किये जा रहे हैं।

इस पर श्री पूनम सूरी जी ने प्रसन्नता व्यक्त करते हुए निर्धन, असहायों की और अधिक गति से सेवा कार्य करने की प्रेरणा दी।

श्री मती कर्म बाई डी.ए.वी. फाजिल्का ने किया वैदिक चेतना शिविर का आयोजन

श्रीमती कर्म बाई डी.ए.वी. शताब्दी पब्लिक स्कूल फाजिल्का ने वैदिक चेतना शिविर का आयोजन स्वामी दयानंद की कर्म स्थली, श्री मोहन वैदिक आश्रम, हरिद्वार में किया, जिसमें प्राचार्य तथा तीन अध्यापकों के नेतृत्व में 40 बच्चों ने भाग लिया।

शिविर में प्रतिदिन सुबह 5:30 से 6:30 बजे तक श्री सुशील वर्मा के निर्देश में योग प्रशिक्षण होता रहा। यज्ञ शाला में दैनिक हवन ने प्रतिदिन बच्चों को स्वामी दयानंद जी की समीपता का आभास करवाया जिससे बच्चों में एक नई उर्जा का संचार हुआ। इस शिविर के दौरान आदरणीय श्री राजीव जी, श्री सुशील वर्मा जी, माता कैलाश जी, श्री अजय ठाकुर जी, श्री विनीत त्यागी जी, श्री मति कैलाश जी तथा अन्य आर्य बंधो ने अपने विचारों से सभी बच्चों का मार्गदर्शन करते हुए स्वामी जी के सच्चे आर्य बनने के लिए प्रेरित किया। श्री ब्रिगेडियर चितरंजन सांवत, श्री मति सुधा सांवत ने तो सभी बच्चों को सच्चे अर्थों में थोड़े समय में ही सच्चे अर्थों में आर्य बनने के लिए प्रेरित किया।

बच्चों को एक विचारशील आर्य बनाने के लिए दो प्रतियोगिताओं का आयोजन किया। पहली प्रतियोगिता दो तारीख को जिसका विषय था *''ईश्वर है या नहीं''* जिसमें सभी विद्यार्थियों ने भाग लिया। दूसरी प्रतियोगिता का विषय था *''क्या हमें वैदिक कैंपका आयोजन करना चाहिए''* इस प्रतियोगिता में भी सभी बच्चों ने भाग लिया।

सभी विद्यार्थियों ने अपने श्रम दान से मोहन वैदिक आश्रम की सफाई और गंगा घाट की सफाई की तथा गंगा को साफ रखने की सौगंध खाई।

एस.बी.आर डी.ए.वी. तलवंडी भाई में चरित्र निर्माण शिविर

शाह बलवन्त राय डी.ए.वी. सी. सै. पब्लिक स्कूल तलवंडी भाई में तीन दिनों का चरित्र निर्माण शिविर आयोजित किया गया। इसका शुभारम्भ हवन यज्ञ से हुआ। इस शिविर में श्री नारायण देव जी (उपदेशक, आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा, जालन्धर) को आमन्त्रित किया गया। उन्होंने विद्यार्थियों को भजन एवं कथा के माध्यम से चरित्र के महत्व पर प्रकाश डाला। शिविर में विद्यालय के प्राचार्य के सहित अध्यापकों व विद्यार्थियों ने भाग लिया। अन्तिम दिन भजन संगीत का कार्यक्रम आयोजित किया गया। आचार्य श्री नारायण देव ने भजन प्रस्तुत कर सभी को मुग्ध कर डाला। इसके बाद अध्यापकों एवं विद्यार्थियों ने भी भजन प्रस्तुत किये। चेयरमैन श्री अमृत लाल छाबड़ा तथा प्रिंसीपल ने शिविर के सफल आयोजन पर सभी अध्यापकों का धन्यवाद किया। अन्त में श्री नारायण देव जी को भी सम्मानित किया गया।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – श्री पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 27 जुलाई, 2014 से 02 अगस्त, 2014

त्रिविध पवित्रता

●डॉ. रामनाथ वेदालंकार

पऋतस्य गोपा न दभाय सुक्रतुः, त्रीष पवित्रा हृद्यन्तरा दधे।
विद्वान्त्स विश्वा भुवनाभि पश्यति, अवाजुष्टान् विध्यति कर्ते अव्रतान्।।

ऋग् ९.७३.८

ऋषिः **पवित्रः आङ्गिरसः** । देवता **पवमानः सोमः** । छन्दः **जगती** ।

● (**ऋतस्य**) सत्य का, (**गोपाः**) रक्षक, (**सुक्रतुः**) शुभ प्रज्ञानों और शुभ कर्मों वाला (सोम प्रभु), (**दभाय न**) हिंसा या उपेक्षा किये जाने योग्य नहीं है।, (**सः**) वह, (**हृदि अन्तः**) हृदय के अंदर, (**त्री पवित्रा**) तीन पवित्रों को–विचार, वचन और कर्म की पवित्रताओं को, (**आ दधे**) स्थापित करता है।, (**विद्वान्**) विद्वान्, (**सः**) वह, (**विश्वा**) समस्त, (**भुवना**) भूतों को, (**अभि पश्यति**) देखता है, (**अजुष्टान्**) अप्रिय, (**अव्रतान्**) व्रत–हीनों को, (**कर्ते**) अंध कूप में, (**विध्यति**) धकेलता है।

● 'सोम' परमात्मा 'ऋत' का संरक्षक और अनृत का घर्षक है। जहाँ भी वह सत्य को पाता है, उसे प्रश्रय देता है। वह 'सुक्रतु' है, शुभ प्रज्ञानों, शुभ विचारों, शुभ संकल्पों और शुभ कर्मों से युक्त है और अपने सम्पर्क में आनेवाले मानवों को भी वैसा ही बनाना चाहता है। परन्तु मानव को सत्य पथ का पथिक तथा 'सुक्रतु' वह तभी बना सकता है, जब मानव उसकी शरण में जाए, उसे आत्म–समर्पण करे, उसे अपने हृदय–मन्दिर में उपास्य देव के रूप में प्रतिष्ठित करे। यदि मानव जीवन में उसकी हिंसा या उपेक्षा ही करता रहेगा, तो उससे मिलनेवाली 'सत्य' और 'शुभक्रतु' की प्रेरणा से वह वंचित ही रहेगा। अतः 'पावनकर्ता' सोमप्रभु किसी से कभी भी उपेक्षणीय नहीं है।

'सोम' प्रभु जब अपने उपासक को पवित्र करना चाहता है, तब उसके हृदय में तीन 'पवित्रों' को स्थापित कर देता है। वे तीन हैं विचार की पवित्रता, वाणी की पवित्रता और कर्म की पवित्रता। मनुष्य के विचार ही वाणी और कर्म के रूप में प्रतिफलित हुआ करते हैं, अतः वाणी और कर्मों को पवित्र बनाने के लिए सर्वप्रथम विचारों की पवित्रता आवश्यक है। यदि किसी मनुष्य के विचार अपवित्र हैं, मन में वह पाप–चिंतना करता रहता है, तो वाणी या कर्म से पाप न भी करे, तो भी वेद–शास्त्र उसे पापी कहते हैं। अतः प्रभु प्रथम अपने कृपापात्र मनुष्य से मन को पवित्र करता है, फिर उस पवित्रता को क्रमशः वाणी और कर्म में भी प्रतिमूर्त कर देता है। 'सोम प्रभु' विद्वान् है, वह प्रत्येक प्राणी की गतिविधि को सूक्ष्मता के साथ देखता है। उसकी आँख से कुछ भी नहीं छिपता। अपनी विवेक–चक्षु से साधु और असाधु की पहचान कर लेता है। साधुओं को सत्कर्म में प्रोत्साहित करता है। जो व्रतहीन हैं, किसी भी शुभ–कर्म के संकल्प से रहित हैं, अतएव जो दुर्वृत्त, अप्रिय और असेव्य हैं, उन्हें दुर्गति के अन्धकूप में धकेलता है, दण्डित करता है। आओ, हम 'पवमान सोम' को अपने जीवन की पतवार सौंपकर मन, वचन और कर्म से पवित्र बनें। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

दो रास्ते

● महात्मा आनन्द स्वामी

दूसरे दिन कथा समाप्त करते–करते स्वामीजी ने कहा कि प्यार उस प्रभु से करो जो सदा रहने वाला है और कैसे करो, यह सीखना हो तो मछली से सीखो। इसी बात को आगे बढ़ाते हुए तीसरे दिन की कथा आरम्भ हुई और स्वामी जी ने पिछले दो दिन में कही हुई बातों को दोहराया और कहा कि सौम्यता का अर्थ नम्रता, सरलता, मधुरता, मीठी वाणी, पवित्र व्यवहार और प्रेमा–भक्ति है। स्वामी जी ने उन लोगों की भी बात की जो इन बातों को बीते युग की बातें बताते हैं और धन–दौलत कमाने के इस युग में दौलत को एकत्र करने में लगे हुए हैं, साधन चाहे जो भी हो।

स्वामी जी ने कहा, वेद का ज्ञान किसी एक युग या काल के लिए नहीं है, किसी एक देश या समाज के लिए नहीं है, यह तो हर युग, हर काल, हर देश और हर समाज के लिए है। वेद कहता है कि आओ, सोम से अपने जीवन को आरम्भ कर अपने जीवन में सौम्यता भर धन लें। यह केवल सतयुग, त्रेता या द्वापर के लिए नहीं, कलयुग में भी ऐसा हो सकता है। उन्होंने बताया कि धन का विरोध नहीं किया जा सकता। जीवन–भर की आवश्यकता पड़ती है। उन्होंने कहा, मैं तो यह कहता हूँ कि यदि धन भी कमाना है तो इसको भी सोम के रंग में रंग दो, अन्यथा वही हाल होगा जो आज धन के पीछे भागने वाली दुनिया का हो रहा है।

उन्होंने कहा कि ये सौम्यता प्रेमा –भक्ति से आती है जिसमें भगवान के लिए ऐसा प्यार पैदा करना होता है जो बगैर किसी रुकावट के हर बलिदान को तैयार हो हर तप के लिए तैयार हो। ऐसी अवस्था हो तो भगवान के दर्शन जरूर होते हैं, लेकिन इस दर्शन के लिए हमें बाहर के पट बंद करके भीतर के खोलने होंगे। योग के मार्ग पर चलते हुए अभ्यास करना होगा जिससे यह अवस्था आए कि प्रभु के सिवाय किसी की कामना ही न रहे। अनेक उदाहरण देकर स्वामी जी ने बताया कि ईश्वर हमारे भीतर ही बैठा हुआ है, निरन्तर अभ्यास से उसको देखने का यत्न करना चाहिए।

अब आगे ....

परन्तु याद रखो! यदि भक्त के प्यार में सचाई है, यदि वह प्रभु के लिए प्रभु को प्यार करता है, तो प्रभु उसके लिए पागल होते हैं अवश्य। वह पत्थर नहीं, लोहे या पीतल की मूर्ति नहीं, वह जीती–जागती, अनुभव करनेवाली शक्ति है। उसे भी प्यार अच्छा लगता है, उसे हिला देते हैं। अब तो वैज्ञानिकों ने विचार की तस्वीरें लेनी भी आरम्भ कर दी हैं। यह विचार है क्या?–

आप यहाँ बैठे हैं। आपके सामने है अथाह सागर। आपके मन में विचार उठता है। उठने के बाद वहाँ नहीं रहता। जैसे एक पत्थर गिर पड़ा हो पानी में, इस प्रकार इस अथाह सागर में गिरता है। इसके गिरने से पानी गिरने से पानी में लहरें उठती हैं। ये लहरें चलती हैं, चलती हैं, चलती हैं, मीलों तक पहुँच जाती हैं। पत्थर से पानी में उठी लहरों और विचार से इस वातावरण में उठनेवाली लहरों के बीच कोई अन्तर है तो यह कि पत्थर से उठनेवाली पानी की लहरें बहुत धीमी चलती हैं; केवल कुछ मील तक जाती हैं। विचार से वातावरण में पैदा होने वाली लहरें बहुत तेज़ी से आगे बढ़ती हैं। लाखों, करोड़ों, अरबों मीलों तक चली जाती हैं। और वह भगवान् जो सर्वव्यापक है, उसके पास भी ये लहरें पहुँचती है। वह भी भक्त की पुकार सुनता है, वह भी उसके लिए व्याकुल हो उठता है। उसकी शक्ति, भक्त की इस प्रेमा–भक्ति को और भी ऊँचा कर देती है, और भी गहरा।

और जब यह प्रेमा–भक्ति अपनी चरम सीमा पर पहुँचती है तो मनुष्य के अन्दर सौम्यता आ जाती है। उसके अन्दर सोम गुण जाग उठता है, उसकी वाणी में मधुरता आ जाती है, चेहरे पर तेज। वह हर समय हँसता हँसता रहता है। कई बार वह पागलों की तरह भी हँसता है, बातें करता है तो उसकी, वर्णन करता है तो उसका, दूसरी कोई बात उसे सूझती नहीं–

चमन की बात हो या बज्मे–मय का नाम आए,
लबों पर तज़करा–ए–यार आ ही जाता है।

बात कुछ भी हो, वर्णन होगा उस परम प्यारे प्रीतम का, और जैसे ही उसका वर्णन हुआ, वैसे ही एक विचित्र मस्ती, एक अनोखा पागलपन–

thearyasamaj.org

मुनहसिर मौसमे–गुल पर नहीं सौदा मेरा,
आ गया जिक्र तिरा, और मैं दीवाना हुआ।

मैं बरतानिया के 'कोल रिन' अस्पताल में था। फ्लू हो गया, अवस्था खराब हुई, अस्पताल में भेज दिया गया। बहुत अच्छी प्रकार उपचार करते हैं वे। बहुत प्यार से सेवा करते हैं। परन्तु बीमारी तो बीमारी है। मैं बिस्तर पर लेटा था, तो इधर सीने में बहुत ज़ोर से दर्द हुआ। बहुत तेज़ दर्द और मैं बहुत ज़ोर से हँस उठा, हँसते हुए कहा– "Very sweet pain !" (बहुत मीठा दर्द है!)

मेरे पास खड़ी नर्स चकित हुई। डॉक्टर आया तो बोली, "यह कैसा रोगी है? इसे दर्द हो तो यह हँसता है। यह तो बीमार मालूम नहीं होता।" डॉक्टर ने मुस्कराते हुए कहा–"He is a wonderful patient." (यह बहुत विचित्र रोगी है।)

परन्तु नर्स को या डॉक्टर को क्या मालूम कि मैं दर्द होने पर हँसा क्यों? इसलिए कि दर्द भी तो मेरे प्रभु प्रीतम की देन है। जिसे मेरा प्यारा दे, उसे पाके रोना क्यों? मैं मुस्कराता रहता हूँ आमतौर से, यह मेरा स्वभाव है। कई लोग चकित होते हैं कि 'यह कैसा आदमी है, हम तो हँस नहीं सकते और यह हँसता ही रहता है।' ऐसे लोगों से मैं कहता हूँ– 'तुम रोते हो तो रोते रहो, तुम्हारे लिए मैं अपने स्वभाव को, अपने विश्वास को तो बदल नहीं सकता। परन्तु यह तो बोलो कि तुम रोते क्यों हो?' कुछ लोग कहते हैं कि– "शक्ल ही ऐसी है।" ऐसे आदमी को मैं समझाऊँ क्या? केवल यह कहता हूँ– "यदि रोना ही है तो घर के अन्दर बैठकर रोया करो।" परन्तु यह रोना, यह दुःख, यह सब तो केवल तब तक है जबतक प्रभु–प्यार की मस्ती मन में पैदा नहीं होती। अरे, इस मस्ती को मन में जगाके तो देखो! ऐसा नशा है यह, जो कभी उतरता नहीं। कभी इसका एक 'पैग' पीकर तो देखो! ऐसी मस्ती मिलेगी, ऐसा नशा ऐसा पागलपन कि जन्म–जन्म के दुःख दूर हो जाएँगे–

जिसे दीवानगी कहते हैं उल्फ़त की नौबत है।
गनीमत है जो सदियों में कोई दीवाना हो जाय।।

ऐसी है प्रभु–प्रेम की शराब! स्वयं वेद भगवान् कहते हैं–

सुरा त्वमसि सुष्मिणी।

'हे भगवन्! तुम सुरा हो, शराब हो, अत्यन्त स्वादिष्ट, बहुत तेज।'

प्रभु–प्रेम की इस शराब का एक पैग पीकर देखो, फिर नशा कभी उतरेगा नहीं। मूलशंकर ने पिया था यह 'पैग' अमावस की रात। सब लोग सोए हुए, खामोश, मन्दिर में एक दीपक, एक बालक, अकस्मात् उसके मन में प्रभु का प्यार जाग उठा, प्रभु–दर्शन की प्यास जाग उठी और इस तरह जागी कि फिर दूसरी कोई बात सूझी नहीं। नर्वदा के तट पर पहुँचे। एक के बाद एक योगी को मिले। हरेक से कहा– "मुझे दर्शन करा दो।" किसी ने कहा– "मूलशंकर! तू बालक है। पहले ब्रह्मचारी बन। यह रेशमी कपड़े उतार, यह आभूषण फेंक दे। तप के मार्ग को अपना, इसके बाद दर्शन करने की बात सोचना।" मूलशंकर ने कहा– "ऐसा ही करता हूँ।" बहुमूल्य कपड़े उतार दिए। सूती कपड़े। पहन लिए। आभूषण फेंक दिए। नाम रख लिया शुद्ध चैतन्य। ब्रह्मचारी बन गए। कई वर्ष बीत गए। अब तो दर्शन करा दो! प्रभु दर्शन के बिना मुझे दिन को चैन नहीं, रात को नींद नहीं आती। मुझे बताओ वह सच्चा शिवशंकर कहाँ है? क्या है? कैसा है?" योगियों ने कहा– "शुद्ध चैतन्य, अभी और तप करना होगा। तुम्हें संन्यास लेना होगा। ये सूती कपड़े भी उतारने होंगे। लँगोटी बाँधकर रहना होगा।" शुद्ध चैतन्य बोले– "यह भी करूँगा। मुझे मेरे शिव का दर्शन करा दो।" और बन गए संन्यासी, नाम रखा दयानन्द। लँगोटी बाँधकर, नंगे बदन, नंगे पाँवों घूमते रहे। महात्माओं से बोले– "अब तो दर्शन करा दो!" और जब देखा कि नर्वदा के किनारे रहनेवाले साधुओं से मन की इच्छा पूरी नहीं होती, तो चल पड़े हिमाचल की ओर, उत्तर– काशी पहुँचे। जमुनोत्री, गंगोत्री, केदारनाथ, ऊँचे पहाड़, घने जंगल, तेज़ बर्फ़ानी हवाएँ, घनघोर घटाएँ आईं, तो ध्यान लगाकर बैठे रहे। बिजलियाँ कड़क उठीं तो भी बैठे रहे, बर्फ़ गिरी तो भी, भूख लगी तो भी, प्यास लगी तो भी। इतने कष्ट सहे उन्होंने कि सुनकर रोंगटे खड़े होते हैं। परन्तु यह सब–कुछ किया उस एक पैग के कारण, जो उन्होंने शिवरात्रि की अँधेरी रात में टंकार के अन्दर लिया था। एक बार नशा हुआ तो फिर उतरा नहीं। कष्टों की चिन्ता नहीं की, दुःखों, आपत्तियों एवं विपत्तियों की चिन्ता नहीं की, तब जाकर मन की मुराद मिली। वह मंजिल मिली जहाँ पहुँचना चाहते थे।

और मंजिल को पाने के लिए तप तो करना ही पड़ता है भाई! कष्ट तो सहने ही पड़ते हैं। जो तप नहीं करता और कष्ट नहीं सहता, उसे मंजिल कभी मिलती नहीं। और इस मंजिल के मिलते ही–

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः,
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे।

'खुल जाती हैं गाँठें, समाप्त हो जाते हैं सब संशय, नष्ट हो जाते हैं जन्म–जन्म के बुरे कर्म, जब इस परब्रह्म परमेश्वर, अपरम्पार प्रीतम का दर्शन होता है।' उस समय सोम का गुण आदमी के अन्दर आता है। उस समय उसकी वाणी में मिठास, उसके व्यवहार में पवित्रता, उसके जीवन में आनन्दभरी मस्ती, उसके चेहरे पर एक मनमोहिनी रोशनी जाग उठती है।

परन्तु सोम की बात अब छोड़िए, दूसरी बात सुनिए। मैं वर्णन कर रहा था– 'श्रेय मार्ग' और 'प्रेयमार्ग'– दो रास्तों का। कल मैंने आपको बताया कि श्रेय मार्ग पर चलने की तैयारी कैसे की जाती है। इसके लिए सामवेद का एक मंत्र है–

सोमं राजानं वरूणं अग्निमनु आरभामहे।
आदित्यं विष्णुं सूर्यं ब्रह्माणं च बृहस्पतिम्।।

'सोमं' की बात कह चुका, अब 'राजानं' की बात सुनिए–

'राजानं' का अर्थ किया गया है यह कि– "हम राजा के साथ अपना जीवन चलाएँ।" जैसे 'सोम' के साथ चलाएँ, वैसे ही 'राजा' के साथ भी।

हमारे शास्त्र कहते हैं राष्ट्र में राजा जरूर होना चाहिए। महात्मा विदुर धृतराष्ट्र को विदुर–गीता का उपदेश दे रहे थे तो उन्होंने कहा–

"अविद्यः पुरुषः शोच्यः।"

'शोक है उस आदमी के लिए जो पढ़ा–लिखा नहीं, जिसे ज्ञान नहीं'–

अविद्यः पुरुषः शोच्यः शोच्यं मैथुनमप्रजम्।
निराहाराः प्रजाः शोच्याः शोच्यं राष्ट्रमराजकम्।।

'शोक है उस आदमी के लिए जिसके पास विद्या की रोशनी नहीं है। शोक स्त्री–पुरुष के उस मिलने पर जिससे सन्तान पैदा नहीं होती। शोक है उस प्रजा के लिए जिसके पास खाने–पीने का सामान नहीं और जो निर्धनता और भुखमरी में फँसी हुई है। शोक है उस राष्ट्र पर जिसका राजा नहीं।'

परन्तु राजा का अर्थ क्या है? राजा का अर्थ है नियम, कानून–कायदा; दूसरों को उनके अनुसार चलानेवाला, और स्वयं भी उनके अनुसार चलनेवाला। राजा के लिए भी जरूरी है कि वह अपने बनाए या पहले बने कानून और कायदे के अनुसार चले। यह नहीं कि दूसरों को चलाएँ, स्वयं बेकानूनी की बातें करता रहे, मर्यादाहीन रास्ते को अपना ले।

यदि राजा ही कानून के अनुसार नहीं चलेगा तो दूसरे क्यों चलेंगे? राष्ट्र में अनारकी फैल जाएगी, विनाश जाग उठेगा। इसलिए जरूरी है कि राजा दूसरों को भी कानून के अनुसार चलाए, स्वयं भी चले। परन्तु यदि कोई राजा ही न हो तो फिर यह सब–कुछ करेगा कौन? इसलिए जरूरी है कि कोई राजा जरूर हो– कोई ऐसा बालवान् शासक जो राष्ट्र को कानून के रास्ते पर ले चले।

और मेरे भाई! इस दुनिया का भी तो राजा है, इस सृष्टि का भी कोई कानून है, विधान है, कायदा है। इस विधान और कायदों के अनुसार आदमी चलता जाए तो श्रेय मार्ग के साथ–साथ उसे प्रेय मार्ग पर चलने का फल भी मिलता है। इसके लोक और परलोक दोनों सुधरते हैं, क्योंकि इस सृष्टि के और इसके राजा उस परब्रह्म परमेश्वर के कानून अटल हैं, कोई उन्हें बदल नहीं सकता।

धरती में चने का दाना बोइए तो वह धरती के अन्दर से चने के परमाणुओं को जमा (इकट्ठा) करके एक से सैकड़ों–हजारों दाने बन जाएगा।

इसी धरती में गंदम का दाना बोइए तो वह गंदम के परमाणुओं को इकट्ठा करके हजारों दानों का रूप धारण कर लेगा।

आम की गुठली बोइए तो आम का वृक्ष ही बाहर आएगा। उसके साथ आम ही लगेंगे, मुसम्मियाँ नहीं, संतरे नहीं, चीकू नहीं, सेब नहीं।

यह प्रकृति का नियम है– उसका कानून, उसका विधान।

मैं नई दिल्ली के टालस्टाय मार्ग पर लाला मेलाराम जी के यहाँ ठहरा हुआ हूँ। अपनी कोठी में कई तरह के फूल उन्होंने लगा रखे हैं– गुलाबी रंग के फूल, गहरे रंग के, सुर्ख फूल, पीले रंग के फूल, आसमानी रंग के फूल, नीले रंग के, बेंगनी रंग के, बसन्ती रंग के। मैं प्रातः इन फूलों को देखता हूँ तो मन–ही–मन में सोचता हूँ– ऐ रंग–बिरंगे फूलो! ये रंग तुमने कहाँ से लिये? मिट्टी में तो कोई रंग नहीं, तुम्हारे अन्दर ये रंग कहाँ से आ गए? और फिर पीला फूल पीला ही क्यों हुआ? लाल क्यों नहीं हो गया? यह बेंगनी रंग का आसमानी क्यों नहीं बना? यह सुर्ख (लाल) रंग का नीला क्यों नहीं हुआ?

इसलिए मेरे भाई! इनमें हर फूल का बीज अलग है, हर बीज उन परमाणुओं को अपनी ओर खींचता है जो उसके लिए निश्चित हैं। प्रकृति अपने कानून को कभी तोड़ती नहीं। आप भूमि में गन्ना बोइए तो गन्ना ही पैदा होगा, केले का वृक्ष वह कभी बनेगा नहीं; और केला बोइए तो उसके वृक्ष पर केले ही लगेंगे, गन्ने कभी उगेंगे नहीं।

यह प्रकृति का अटल नियम है। दुनियाभर के वैज्ञानिक जोर लगा लें, यह नियम कभी बदलेगा नहीं। जैसा बीज होगा वैसा ही पौधा उगेगा, वैसे ही फल लगेंगे। आम के वृक्ष पर मिर्चें, मिर्चों के पौधे पर आम कभी लगेंगे नहीं।

यही हाल पशुओं का भी है। कोई गाय किसी बैल को तबतक अपने समीप आने की आज्ञा नहीं देती जबतक उसके बच्चा पैदा करने की तैयारी का समय न आ जाए।

शेष अगले अंक में....

thearyasamaj.org

ईशोपनिषद् का कथ्य

● डॉ. धर्मवीर सेठी

वेदान्त दर्शन के '**अथातो ब्रह्म जिज्ञासा** (1/1/1) सूत्र में अथ, अतः ब्रह्म और जिज्ञासा (ज्ञातुं इच्छा इति)– इन चार शब्दों के प्रयोग से ब्रह्म क्या है, इसके आध्यात्मिक चिन्तन से क्या अभिप्रेत है– इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर जानने की इच्छा व्यक्त की गई है। और इन असीम जिज्ञासाओं का शमन कौन कराएगा? गुरु ही न। बस यहीं से गुरु और शिष्य का पवित्र रिश्ता आरम्भ होता है। जिज्ञासु तो शिष्य ने ही होना है:

यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे,
शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्।।–गीता 2/7

अर्थात् जो साधन निश्चित कल्याणकारक हो, वह मेरे लिए कहिए; क्योंकि शिष्य हूँ, इसलिए आपकी शरण में आए हुए मुझको शिक्षा दीजिए।

केनोपनिषद् में भी शिष्य ने यही जिज्ञासा व्यक्त की है:

उपनिषदं भो ब्रूहीत्युक्ता त उपनिषद् ब्राह्मी वाव त उपनिषदमब्रमेति (7)

अर्थात् शिष्य ने कहा कि हे भगवन्! उपनिषद् को कहिए। गुरु ने कहा, हे शिष्य! तुझे सचमुच ब्रह्म सम्बन्धी उपनिषद् (रहस्य) बता दिया है।

वैदिक वाङ्मय के प्रायः तीन भाग माने जाते हैं: 1. संहिता (मन्त्र भाग); 2. ब्राह्मण भाग और 3. उपनिषद् भाग। प्रथम दो भागों का प्रयोजन प्रायः यज्ञ – सम्पादन से है, तो उपनिषद् भाग ज्ञान और उपासना का उपदेश करता है। प्रस्थानत्रयी (गीता, उपनिषद् और ब्रहमसूत्रो मे उपनिषद् का विशेष महत्त्व है। शायद इसी कारण उपनिषद् रूपी गौओं से गीतामृतरूपी दूध का दोहन तो प्रसिद्ध ही है:

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः।
पार्थोवत्सः सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत्।।

वस्तुतः उपनिषद् अध्यात्म चिन्तकों की अक्षयनिधि हैं। जर्मन दार्शनिक विद्वान् शोपनहार ने भविष्यवाणी की थी : "in the world there is no study so beneficial and elevating as that of the Upanishads: they are the product of highest wisdom"

उपनिषद् शब्द की व्युत्पत्ति 'उप' (समीपे) और 'नि' (विशेष रूप से) इन दो उपसर्गों में 'क्विप्' प्रत्ययान्त 'सद्' धातु से होती है। –'सद्' धातु के तीन अर्थ होते हैं।– विशरण (नाश), गति (प्राप्ति) तथा अवसादन (अन्त)। इसलिए उपनिषद् की परिभाषा हुई– वह ज्ञान जिससे अविद्या का नाश होकर आत्मज्ञान की प्राप्ति और दुख का अन्त होता है। एक अन्य परिभाषा के अनुसार 'सद्' धातु से 'नि' उपसर्ग लगाकर 'निषीदति' आदि प्रयोगों के आधार पर जिज्ञासुओं का ब्रह्मज्ञानी गुरुओं के (उप) पास बैठकर ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति करना भी उपनिषद् शब्द से अभिप्रेत है। अर्थात् अपनिषद् एक रहस्य तत्त्व की ओर संकेत करने वाला साहित्य है जिससे जिज्ञासु के त्रिविध दुःखों (**दैहिक, दैविक, भौतिक, तापों**) का उन्मूलन होता है परन्तु यह तभी सम्भव होता है जब शिष्य (जिज्ञासु) गुरु (ब्रह्मवेत्ता) का 'अन्तेवासी' (उसके दिल में निवास करने वाला) अर्थात् अभिन्न बन जाए? यही तो इन दोनों उपसर्गों 'उप' और 'नि' की विशेषता है।

वैसे तो उपनिषदों की संख्या प्रायः 108 बताई जाती है (माला के 108 मनकों की तरह) परन्तु आदि शंकराचार्य से महर्षि दयानन्द तक के प्रमुख आचार्यों के मतानुसार अधोलिखित 11 उपनिषद् लोकप्रिय और प्रामाणिक मानी गई हैं: 1. ईश 2. केन, 3. कठ 4. प्रश्न 5. मुण्डक 6. माण्डूक्य 7. ऐतरेय 8. तैत्तिरीय 9. छान्दोग्य 10. बृहदारण्यक और 11. श्वेताश्वतर।

सूची में ईशोपनिषद् अथवा ईशावास्योपनिषद् को प्रथम स्थान पर रखा गया है। इस नाम का गूढ़ार्थ भी यही है कि इसमें ईश की विद्या अर्थात् ब्रह्मविद्या का निरूपण हुआ है। यह उपनिषद् यजुर्वेद की काण्व शाखा का 40वाँ अध्याय है। इस का आरम्भ ही 'ईश' (ईश्वर,ऐश्वर्य) शब्द से होता है:

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।।1।।

इस मन्त्र के अन्तिम चरण ' मा गृधः कस्यस्विद्धनम् में 'धनम्' और 18वें मन्त्र की प्रथम पंक्ति ' **अग्ने नय सुपथा राये अस्मान** ....' में 'राये' (अर्थात् धनाय–धन के लिए) शब्दों में कितना साम्य है। 'धन का लोभ न करना, क्योंकि धन कभी भी किसी का नहीं रहा' और धन का अर्जन सुपथ–अच्छे मार्ग–पर चलकर करना– साम्यता के साथ–साथ कितना मार्मिक चिन्तन है। धन सुख दे सकता है आनन्द नहीं; शस्त्र दे सकता है साहस नहीं; भोजन दे सकता है भूख नहीं; पलंग दे सकता है नींद नहीं; पत्नी दे सकता है धर्मपत्नी नहीं; दवाई दे सकता है स्वास्थ्य नहीं; पुस्तकें दे सकता है ज्ञान नहीं, इत्यादि इत्यादि। अभिप्राय यह है कि धन से मात्र साधन प्राप्त हो सकते हैं साध्य नहीं। इसलिए साधन और साध्य की प्राप्ति के लिए कुपथ का अनुसरण अथवा आलम्बन कभी भी श्रेयस्कर नहीं। होता। 'जगत्' शब्द के तीन व्यंजन ज (जायते), ग (गच्छति) और त् (स्थीयते) मिलकर उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय तीनों का वाचक है।

आइए। इन अठारह मंत्रों की अन्तरात्मा का अवगाहन करें:

प्रथम मंत्र : इस धरती के कण–कण में परमसत्ता का वास है और धन पर किसी एक व्यक्ति का अधिकार नहीं। परमेश्वर तो सब के मन में बैठा रहता है – **ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति** (गीता 18/61)। 'त्यक्तेन' का सर्वोत्तम उदाहरण महर्षि दयानन्द की वाणी से अन्तिम समय में निःसृत शब्द "ईश्वर! तेरी इच्छा पूर्ण हो' संसार में अनासक्त भाव से रहने ही पराकाष्ठा के परिचायक हैं।

द्वितीय मंत्र : जीवनोपयोगी कर्म करते हुए ही सौ वर्ष या उससे अधिक जीवन जीने की कामना करो। '**जीवेम् शरदः शतम्**'। कर्म करना ही उपासना है उपनिषद् जीवन की अंतिम घड़ी तक कर्मनिष्ठ बने रहने की प्रेरणा देती है।

तृतीय मंत्र : आत्मा को शक्तिहीन और निराश करने वाले अत्यन्त घने अन्धकार वाले वातावरण से घिरे रहते हैं। आत्महत्या को अत्यधिक नकारात्मक वृत्ति माना गया है।

चतुर्थ मंत्र : ब्रह्म की सर्वव्यापकता, सर्वत्र गति और उपस्थिति को सिद्ध किया गया है। **'एकम्' परमात्मा एक ही है। 'एको ब्रह्म द्वितीयो नास्ति', 'एको देवः सर्व भूतेषु गूढः' (श्वेता० 6/11 और 'एकं सद्' विप्रा बहुधा वदन्ति' (ऋ० 1/164/46)**

पंचम मंत्र : **'तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके'** में बहुत सरल भाषा में इस 'आत्मा' या 'चेतन तत्त्व' के बारे में उसकी अविच्छिन्नता, अखण्डता एवं सर्वव्यापकता को दर्शाया गया है। परमात्मा सारे ब्रह्माण्ड को गति देता है।

छठा एवं सातवाँ मंत्र : सबके अन्दर एक ही आत्मा है और सब प्राणी उसी एक परम आत्मा के अंश और अंग हैं। जैसे ही इस आत्मगत एकता की अनुभूति होती है, मनुष्य में शोक या मोह का अवकाश नहीं रह जाता।........

आठवाँ मंत्र : आत्मा के विशाल से विशालतम होते हुए रूप को ही ब्रह्म कहा गया है। सृष्टि की विशालता को देखते हुए यह असम्भव है कि उसकी उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय करने में कोई शरीरधारी एकदेशी सत्ता समर्थ हो सके ।

नवें, दसवें और ग्यारहवें मंत्रों में विद्या और अविद्या की चर्चा करते हुए कहा गया है कि इन दोनों को जानना परम आवश्यक है। जो बातें आत्मिक उन्नति में सहायक हैं उन्हें 'विद्या' कहते हैं और जो ग्राह्य और अग्राह्य दोनों पक्षों का ज्ञान होना परमावश्यक है।

बारहवें, तेरहवें और चौदहवें मंत्रों में 'असम्भूति (अवनति) और 'सम्भूति' (उन्नति) इन विशिष्ट शब्दों की चर्चा करते हुए कहा गया है कि अन्धकारपूर्ण होने पर भी इन दोनों मार्गों की वास्तविकता का ज्ञान मृत्यु के भय से मुक्ति चाहने वाले हर प्राणी को होना ही चाहिए।

पन्द्रहवाँ मंत्र अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है: 'हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखं' अर्थात् सच्चाई बाहरी चमक–दमक के अन्दर छिपी रहती है। सत्य पर पड़े ये आवरण स्वतः आकर्षक और असत्य होते हैं। इन्हें दूर करने के लिए ही तो उस पोषण करने वाले परमात्मा से प्रार्थना की गई है। All that glitters is not gold.

सोलहवें मंत्र में कहा है ' जगत् के सब पदार्थों और प्राणियों में वह एक ही 'आत्मा व्याप्त है। अतः सब प्राणिमात्र एक समान हैं' – **'सोऽहमस्मि'** (He who dwells in each being is all pervading.)

सत्रहवाँ मंत्र प्राणी मात्र को जागरूक करता है। **'ओ३म् क्रतो स्मर कृतँ स्मर'** अर्थात् हे मनुष्य अपने किए हुए कर्मों और कर्त्तव्यों का स्मरण करना ही अभीष्ट है क्योंकि मृत्यु के बाद भी जो तत्त्व अमर होकर बचा रहता है वह 'आत्मा' है। The last day (death) does not bring extinction, but a change of place.

अठारहवें मंत्र में अग्निदेव (अग्नि अग्रणी भवति) से प्रार्थना की गई है कि वह हमें उत्तमोत्तम मार्ग की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा दें। **कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहितः** (अथर्व० 7/52/8)

अन्त में इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि अठारह मंत्रों के इस उपनिषद् का एक ही संदेश है कि "जीवन को खुली आँखों से परखो और धन–ऐश्वर्य को सब की साँझी निधि मानकर भोगो। जीवन से भागो नहीं, उसे उचित कर्म करके भोगो।

–'वरेण्यम्', ए–1055
सुशान्त लोक
गुडगाँव–122009.

उत्कृष्ट शङ्का समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

शंका–आत्मा हर समय सुविचारों को ही क्यों नहीं उठाता, क्योंकि आत्मा को पवित्र बताया गया है? मन में अशुद्ध विचार जैसे–चोरी–व्यभिचार, हिंसा, असत्य आदि अनुचित विचार क्यों आते हैं?

समाधान – यहाँ प्रश्न पूछा है कि आत्मा मन के द्वारा अपने विचारों को प्रकट करता है। सुना है कि आत्मा नित्य है, शुद्ध है, बुद्ध है, इसलिए मन में अच्छे ही विचार आने चाहिए। आत्मा अपने स्वरूप से शुद्ध व पवित्र है तो हमारे मन में बुरे विचार क्यों आते हैं? इसके बहुत सारे कारण हैं:–

- अपनी इच्छा से जीवात्मा खराब काम नहीं करना चाहता, गलती नहीं करना चाहता। स्वयं तो वो अच्छी बात ही चाहता है, सुख ही चाहता है, अच्छे काम ही करना चाहता है।
- 'अविद्या' नाम का एक दोष है, जो जीवात्मा के साथ जुड़ जाता है। आत्मा यद्यपि स्वरूप से शुद्ध है। शुद्ध होते हुए भी, आत्मा के पास जो ज्ञान है, वह कुछ अशुद्ध है। यानी आत्मा में कुछ तो विद्या है और कुछ उसमें अविद्या भी है। अविद्या (उल्टे ज्ञान) के कारण वो मलीन हो जाता है।
- यह दोनों विद्या–अविद्या नैमित्तिक हैं यानि कि यह बाहर से जीवात्मा में आती हैं। कहीं वह अड़ोस–पड़ोस के लोगों से कुछ बुरी बातें सीख लेता है। उसके कारण बुरे विचार करता है। कुछ टेलीवीजन से, कुछ कंप्यूटर से,कुछ मोबाईल से, कुछ इंटरनेट से, कुछ पढाई–लिखाई के सिलेबस से, कुछ मित्र–मण्डली से, कुछ सरकार के कानूनों से, ऐसे–ऐसे बहुत सारे कारण हैं, जिनसे व्यक्ति बुरे विचार भी कर लेता है। प्राकृतिक रजोगुण, तमोगुण की वजह से भी जीवात्मा में यह अविद्या, राग–द्वेष आदि दोष उत्पन्न हो जाते हैं। इस गड़बड़ी के कारण कभी–कभी वो बुरे विचार उठा लेता है, बुरे काम भी कर लेता है, गलत भाषा भी बोल देता है।
- जब यह अविद्या ऊपर से चिपक जाती है, तो उस अविद्या के कारण, उन संस्कारों के कारण जीवात्मा बुरे विचार यानी गड़बड़ विचार (उल्टी सोच) करता है। इसी अविद्या के दोष के कारण वो अच्छे विचार भी उठा लेता है और बुरे विचार भी उठा लेता है। अविद्या के कारण उसमें राग और द्वेष उत्पन्न हो जाते हैं। इस प्रकार कुछ विद्या भी है और कुछ अविद्या भी है।
- अविद्या के प्रभाव से प्रेरित होकर जीवात्मा झूठ बोलता है, चोरी करता है, व्यभिचार करता है, अन्याय करता है, शोषण करता है, छल–कपट करता है, हिंसा करता है, निंदा–चुगली करता है। अविद्या जीवात्मा को लपेट लेती है, क्योंकि जीवात्मा अल्पज्ञ है। जीवात्मा बेचारा कमजोर है, इसलिए अविद्या उसको आकर दबा लेती है, वो बेचारा पिट जाता है। अविद्या के नीचे दबकर जीवात्मा उल्टे सीधे काम करता है।
- ईश्वर सर्वज्ञ है, उसको अविद्या नहीं लपेट सकती, उसको अविद्या नहीं दबा सकती। उसमें ज्ञान की पराकाष्ठा होने से अविद्या उसे नहीं सताती।
- अनेक जन्मों से अविद्या हमारे अंदर चली आ रही है। जब व्यक्ति अविद्या को दूर कर लेता है तो हर समय सुविचार ही उठाता है।
- कोशिश करनी चाहिए कि बुरे विचारों से बचें , बुरे विचारों को रोकें, अच्छे विचार करें, अच्छी भाषा बोलें, अच्छे कर्म करें। ऐसा हमको पूरा प्रयत्न करना चाहिए। इसका उपाय है– वेदों का अध्ययन, ईश्वर का ध्यान और निष्काम –सेवा करना।

शंका–ज्ञान बिना कर्म नहीं, तो मोक्ष के लिए पतंजलि निर्दिष्ट अष्टांग योग पढ़ना,समझना, आचरण में लाना क्यों काफी नहीं है? हर एक दर्शन, वेद पढ़ना क्यों जरूरी है? इसमें तो काफी समय लगेगा?

समाधान – इन दो प्रश्नों के उत्तर निम्नलिखित हैं–

- मुक्ति भी कोई जल्दी थोड़े मिलने वाली है। मुक्ति प्राप्त करने में समय तो लगेगा।
- सारे दर्शन पढ़ना होगा। केवल योग –दर्शन से काम नहीं चलेगा। केवल एक शास्त्र पढ़ने से हमारा ज्ञान–विज्ञान उतना विकसित नहीं होता उसका ज्ञान बहुत संक्षिप्त और सीमित रहता है। बहुत सी बातें समझ में नहीं आतीं। मन में प्रश्न उठेंगे–ईश्वर को क्यों मान लो, पुनर्जन्म को क्यों मान लो , मुक्ति को क्यों मान लो। इन प्रश्नों का उत्तर कहाँ से लाएँगे? इनका उत्तर योग–दर्शन तो नहीं देगा। और योग–दर्शन देगा तो, सीधा–सीधा वाक्य बोल देगा–हाँ भाई, ईश्वर होता है, सबका गुरु है, अनादिकाल से है, अनंतकाल तक रहेगा। इतने में तो आपको संतोष नहीं होगा।
- आज तो साइंस का विद्यार्थी पहले पूछता है कि 'क्यों' मान लें? क्यों का उत्तर, योग–दर्शन नहीं देगा। उसका उत्तर देगा–'न्याय दर्शन'। अगर आपको 'क्यों' का उत्तर नहीं मिलेगा, तो आपको 'संतोष' नहीं होगा। बात आपके दिमाग में जमेगी नहीं।

आप कहेंगे–''यह तो बस ऐसे ही थोपा–थोपी वाली बात है। मान लो, हाँ, भगवान है, मान लो, अगला जन्म है। भई, हमको नहीं जँचती, यह ''मान लो वाली'' बात। इतने से बात नहीं बनेगी। क्यों मान लो? उसका कारण हमको स्पष्ट होना चाहिए। दिमाग में बैठना चाहिए, तब मानेंगे।''

इसके लिए व्यक्ति को अन्य दर्शन भी पढ़ने होंगे। इसमें कोई शंका नहीं है कि–पढने में लंबा समय लगेगा और वो समय लगाना पड़ेगा, आपको भी और मुझे भी मेहनत करनी है, कीजिए।

- प्रश्न यह भी किया है कि जीवन का लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति ही है तो क्या संस्कृत पढ़ना, चारों वेद पढ़ना, सभी दर्शन पढ़ना जरूरी है? सारे न भी पढ़ो तो कम से कम इतना तो पढ़ लो कि दुनिया समझ में आ जाए, ईश्वर समझ में आ जाए, जीव समझ में आ जाए।

इतना तो व्यावहारिक रूप से समझ में आना चाहिए कि–

''तीन वस्तुएँ अनादि हैं, तीनों के गुण, कर्म, स्वभाव ये–ये हैं। प्रकृति दुःखदायी है, चारों ओर दुःख ही दुःख है।''

महर्षि पतंजलि लिखते हैं– 'दुखमेव सर्वम् विवेकिनः'। बुद्धिमान व्यक्ति की दृष्टि में चारों ओर दुःख है। और इतना समझने के लिए भले ही आप चारों वेद न भी पूरे पढ़ें, परन्तु कुछ दर्शन, कुछ संस्कृत, कुछ उपनिषद, कुछ वेद तो पढ़ना ही होगा। इसके बिना बात नहीं बनेगी।

- सांख्य दर्शन का पहला सूत्र है–'अथ त्रिविध दुःखात्यन्तनिवृत्तिरत्यन्त पुरुषार्थः। अर्थात तीन प्रकार के दुःखों से पूरी तरह छूट जाना, यह मनुष्य का सबसे अंतिम लक्ष्य है। इसलिए दुःखों से छूटो और मोक्ष की प्राप्ति करो। बार–बार शुरू से आखिर तक सभी दर्शन, वेद, उपनिषद् यही कहते हैं।

अष्टांग–योग का पालन करिए। थोड़ी संस्कृत भाषा सीख लीजिए। चार–पाँच दर्शन पढ़ लीजिए। इतना तो जरूरी है बाकी अपना योगाभ्यास कीजिए, समाज की सेवा कीजिए, मोक्ष मिल जाएगा।

शंका–क्या मुक्ति के लिए मनुष्य योनि ही अनिवार्य है? अन्य योनियों में मुक्ति नहीं हो सकती?

समाधान – मुक्ति केवल मनुष्य योनि में ही होती है और किसी प्राणी के शरीर से मुक्ति नहीं होने वाली है। गाय के शरीर से डायरेक्ट मुक्ति नहीं होगी। मनुष्य शरीर में भी केवल संन्यासी का मोक्ष होता है, और किसी का नहीं होता है।

दर्शनयोग महाविद्यालय
रोजड़वन (गुजरात)

वधु चाहिये

हैदराबाद के हैटेकसिटी में कार्यरत 33 वर्षीय अपंग साफ्टवेयर इंजिनियर को 23 से 26 वर्षीय 12वीं या स्नातक तक शिक्षित, वैदिक–संस्कृति–संस्कार युक्त, एवम् शुद्ध शाकाहारी वधु चाहिए। जात–पात का कोई बन्धन नहीं।

संपर्क – 08142772392
09885667682

thearyasamaj.org

मुक्ति राजनीतिक परिवर्तन की आँधी में कहीं हम भूल न जाएँ।

अंग्रेजी पत्रकारिता के राष्ट्रवादी दीपस्तम्भ गिरिलाल जैन के अवदान को

● हरिकृष्ण निगम

श्री लालकृष्ण आडवाणी के अनुसार यदि आज के युग के सर्वाधिक प्रभावशाली राजनैतिक विश्लेसकों या प्रतिबद्ध भारतीय पत्रकारों का समग्र आकलन किया जाए तो 'टाइम्स आफ इण्डिया' के भूतपूर्व सम्पादक गिरिलाल जैन को राष्ट्रवादीपत्रकारिता का दीपस्तम्भ कहा जा सकता है। वैसे आज के 'टाइम्स आफ इण्डिया की व्यावसायिकता की अंधी दौड़ ने गत अनेक वर्षों से इसे पश्चिमी देशों और अमेरिका में भी पत्रकारिता के अनेक स्वीकृत मानदण्डों और अनेक राष्ट्रविरोधी लाबियों का लोलुपता के कारण बनने वाला मोहरा तक कह डाला है। अमेरिकी पत्रकार केन औलेहा के लाखों शब्दों में प्रकाशित 'न्यूयार्कर' पत्रिका के लेख तो आज की बात है जिनमें समीर जैन के इस पत्र के प्रबंधन व सम्पादकों पर बनाए शिकेजो के सनसनी खेज खुलासे हैं, पर वर्षों पहले भी जब वे सम्पादकों को छुट्टी पर जाने को मजबूर कर निरंकुश शक्ति प्रदर्शन करते थे और आंतरिक लोकतंत्र की बाजारवादी दृष्टि से कुचलते थे तब भी वह यदाकदा प्रकाश में आता था। इस परिप्रेक्ष्य में जहाँ पत्रकारिता का स्तर आलेकित किया जा रहा था। गिरिलाल जैन को याद करना समीचीन है। आज समीर जैन 'टाइम्स' को देश के एजेन्डा नीतियों का सेन्टर बनाने के साथ जनमत के प्रवक्ता के रूप में भी प्रस्तुत करना चाहते हैं। जब से समीर जैन बेनेट कोलमेन कम्पनी के उपाध्यक्ष व इनके भाई विनीत जैन प्रबंध निदेशक बने उन्होंने सिद्धान्तों व आदर्शों की पत्रकारिता को तिलांजलि वेदी व 'पेड–यूज' व निजी अनुबंधों को जो वे निगमित क्षेत्र में करते थे उन्हें प्रारंभ किया। उनके पिता अशोक जैन सरकार द्वारा आर्थिक अपराधों के कारण दण्डित किए गए थे और 1999 में क्लीवलैण्ड के एक अस्पताल में हृदय रोग से उनकी मृत्य हुई थी।

जहाँ विश्नविख्यात 'न्यूज कार्य' की नकल करते–करते वे आज एक 'मीडिया येनीपुलेटर' बन कर रह गए हैं वे सम्पादक के पद को समाप्त करने में शुरु से मशहूर रहे हैं। गिरिलाल जैन की पत्रकारिता की प्रतिष्ठा, स्वतंत्रता व उनका अनूठापन सन 1994 की एक घटना के सन्दर्भ में भली भाँति समझा जा सकता है। जब दिलीप पाडगांवकर जैसे के निजी सचिव तथा कारपोरेट निदेश रहे वी.जी. जिन्दल के 'टाइम्स' के कार्यकारी सम्पादक के रुप में नियुक्ति और एक एकाउन्टेन्ट गोपालन की सम्पादकीय टीम में प्रतिनियुक्त सोची समझी रणनीति के तहत की गई। समीर जैन टाइम्स आफ इण्डिया को अपनी और परिवार की मिल्कीयत समझते रहे थे पर गिरिलाल जैन भी उस समय स्वाभिमानी सम्पादक के रूप थे। समीर जैन का अंहकार अपनी तरह से तोड़ते थे उनको नौकरी देने वाले समीर प्रधानमंत्री से मिलने के सपने भी नहीं दे सकते थे जबकि गिरिलाल जैन जब चाहते प्रधानमंत्री से चर्चा करने के लिए मिल सकते थे।

आज के देश के एक बड़े 'टाइम्स आफ इण्डिया' जैसे मुखर बहुसंख्यक–विरोधी दृष्टिकोण वाले पत्र के पूर्व सम्पादकों तक ने भी यह कभी सोचा न होगा कि 1970 से जब गिरिलाल जैन इसके प्रधान सम्पादक के पद पर आसीन हुए वे उनकी दृष्टि वर्तमान से बहुत आगे भविष्य के भारत की तस्वीर खोजती आई थी। हिन्दू शासन व्यवस्था–पालिटी उनका आदर्श थी और उसकी वे एक युगान्तरकारी व्याख्या करते रहे थे। भारत सरकार द्वारा उन्हें पद्मभूषण की उपाधि से सम्मानित करना तो अलग बात थी क्योंकि उनकी पत्रकारिता की यात्रा एक मैराथन दौड़ से कम नहीं थी। 1950 में 'टाइम्स ऑफ इण्डिया' में कनिष्ठ उपसम्पादक के रूप में प्रारम्भ कर 1986 वे इसी पत्र के सम्पादक के पद से अवकाश प्राप्त करने पर भी आपने लेखन द्वारा उन्होंने सेकुलर मिथ्यावादियों के विरुद्व अकेले मोर्चा सँभाला था।

पहले सन् 1951 में ही वे 'टाइम्स आफ इण्डिया' में संवाददाता बने और 1950 में इस पत्र के पाकिस्तान में मुख्य संवाददाता नियुक्त किए गए। वे 1964 में पुनः दिल्ली सहायक सम्पादक के रूप में लौटे और 1976 मुख्य सम्पादक बनाए गए।

श्री गिरिलाल जैन उन दुर्लभ सम्पादकों में से थे जिन्होंने अयोध्या के राम मन्दिर के आन्दोलन को एक ऐतिहासिक मोड़ के रुप में वर्णित किया था। श्री जैन के अनुसार सन् 1992 भारतीय इतिहास में अयोध्या वर्ष के रूप में मनाना चाहिए क्योंकि भारतीयता के नवोन्मेष का एक पहलू था और किसी भी भारतीय को इसके लिए आत्मग्लानि का शिकार नहीं, बल्कि गौरवान्वित महसूस करना चाहिए। श्री जैन अयोध्या आन्दोलन को आत्मस्थापना के लिए हिन्दुओं द्वारा किए गए दो सौ वर्षों के प्रयास के परिणाम के रुप में देखते थे। इतिहासकार भले ही कुतर्क करें कि बाबरी ढाँचे के स्थान पर कोई मन्दिर था या नहीं लेकिन इतिहास में सभ्यतागत मामले इस तरह नहीं सुलझाए जाते हैं। श्री जैन आडवाणी जी के सर्म्पक में ही नहीं अच्छे मित्र भी बन गए थे। उन्होंने दिल्ली में आयोजित उस सभा की अध्यक्षता भी की थी जिसमें आडवाणी जीने कानराड एल्रट द्वारा अयोध्या पर लिखे ग्रंथ का लोकार्पण किया था।

यह भी एक अल्पज्ञात तथ्य है कि एक समय गिरिलाल जैन ने नियमित रूप से दिल्ली के एक प्रतिष्ठित साप्ताहिक 'पांचजन्य' में दिशादर्शन स्तम्भ के अन्तर्गत विशिष्ट लेख लिखना शुरु किया था जिसे बाद में पुस्तकाकार भी प्रकाशित किया गया था। यह उस समय की बात है जब अयोध्या के आन्दोलन की राष्ट्व्यापी लहर के बाद देश की राजनीति करवट बदल रही थी। श्री जैन का उस समय प्रसिद्ध अंग्रेजी पत्रों को फटकार लगाना कि वे आक्रामक हिन्दू विरोध की प्रेतछाया से ग्रस्त हैं एक क्रान्तिकारी रणनीति ही कही जा सकती थी।

गत वर्ष 'टाइम्स ऑफ इण्डिया' ने अपने 175 वर्ष के इतिहास पर कई विशेष आयोजनों के अतिरिक्त घटनाक्रमों का एक बृहद संकलन भी प्रकाशित किया था। हर जगह अपने पूर्व सम्पांदकों में विशेषकर गिरलाल जैन जी की स्मृति को जिस तरह उपेक्षित किया गया था वह खटकने वाला था। आज के बदले समय में जब देश के उनके सपने साकार हुए उनको विस्मृत करना प्रबुद्ध वर्ग के लिए अक्षम्य कहा जा सकता है।

ए–1002 पंचशील हाईटस
महावीर नगर, कान्दिवली (पं)
मुम्बई – 400069

मुक्ति मार्ग

अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता।
गोभाज इत्किलासथ यत्सनवथ पूरुषम्।।

यजु. 12/79/11

पद्यानुवाद

संसार अश्वत्थ है जो स्थिर कभी रहता नहीं।
है बदलता जो निरन्तर वह कभी रुकता नहीं।।

पत्ते की भांति है मनुज जीवन मिला।
पवन का झोंका लगा और बस यह चल बसा।।

इन्द्रियों के फेर में मानव तू इतना बह गया।
सासें पूरी हो गयीं और हाथ मलता रह गया।

ध्यान से सुन ले तू मानव! आखिरी आवाज़ है।
ईश को कर ले नमन, बस मुक्ति का यह राज़ है।।

डॉ.प्रमोद योगार्थी प्राचार्य
दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार

thearyasamaj.org

विष ही महर्षि की मृत्यु का कारण

● डॉ. अशोक आर्य

स्वामी दयानंद सरस्वती जी के देहावसान के कारण जहाँ जोधपुर राज्य सहित अनेक कुचक्रगामी रहे, वहाँ दूध में विष भी उनके बलिदान का मुख्य कारण रहा। जब से महर्षि का देहावसान हुआ है, तब से ही जोधपुर के राज परिवार का यह प्रयत्न रहा है कि किसी प्रकार से जोधपुर राजघराने से एक ऋषि की हत्या का दोष हटाया जा सके। इस कड़ी में अनेक प्रयास हमारे सामने आते हैं जो उस राज परिवार के द्वारा हुए हैं तथा हो रहे हैं। किसी रूप में जो आर्य ही सहभागी बनते हुए दिखाई देते हैं, समय समय पर ऐसे आर्यों की कलम से आर्यों के ही विरोध में किये जा रहे कुप्रयास को दूर करने का यत्न आर्य समाज के महान लेखकों ने किया है, इन पंक्तियों में मैं भी कुछ ऐसा ही प्रयत्न करने का साहस कर रहा हूँ।

लगभग चालीस वर्ष पूर्व ऐसा ही एक प्रयास श्री लक्ष्मीदत्त दीक्षित ने किया था, जिनका मुँह तोड़ उत्तर अबोहर से प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जी ने अनेक लेखों के माध्यम से देते हुए यह सप्रमाण सिद्ध किया था कि महर्षि के देहांत का कारण विष ही था। इस अवसर पर उन्होंने एक पुस्तक भी तैयार की थी 'महर्षि का विषपान अमर बलिदान'। यह पुस्तक आर्य युवक समाज अबोहर ने प्रकाशित की थी। इसका प्रकाशन उस समय हुआ था, जब मैं आर्य युवक समाज अबोहर के प्रकाशन विभाग का मंत्री होता था अर्थात् इस पुस्तक का प्रकाशन मैंने ही किया था। इस पुस्तक में स्वामी जी के देहावसान का कारण विषपान सटीक रूप से सिद्ध किया गया था तथा इससे पंडित लक्ष्मीदत्त दीक्षित जी की बोलती ही बंद हो गई थी। वह इस आधर पर जो पुस्तक लिखने जा रहे थे, उसे लिखने का विचार ही उन्होंने त्याग दिया। हमारे विचार में इतने सटीक प्रमाण आने के बाद आर्य समाज में यह विवाद खड़ा करने का प्रयास बंद हो जाना चाहिए था। किन्तु आर्य जगत दिनांक 29 मई से 31 मई 2004 के पृष्ठ 1 पर श्री कृष्ण चद्र गर्ग पंचकुला का लेख 'जगन्नाथ ने महर्षि को दूध में विष दिया – एक झूठी कहानी' के अंतर्गत यह लिखने का यत्न किया है कि महर्षि को विष देने की कथा झूठी है। इसके माध्यम से एक बार फिर यह विवाद खड़ा करने का यत्न किया है। मैं नहीं जानता कि गर्ग जी ने किस पूर्वाग्रह के कारण यह लिखा है। किन्तु मैं बता देना चाहता हूँ कि इस लेख के लेखक को संभवतया या तो महर्षि के देहावसान के सम्बंध में कुछ ज्ञान ही नहीं है, या फिर वह जानबूझ कर इस विवाद को बनाए रखना चाहते हैं। ताकि कुछ उल्लू सीधा किया जा सके।

लेखक ने स्वामी जी ने रसोइए के नाम का विवाद पैदा करने का यत्न किया। स्वामी जी को दूध देने वाला जगन्नाथ था, धुड मिश्र था या कोई अन्य। नाम के विवाद में पड़ने की आवश्यकता नहीं है। नाम चाहे कुछ भी हो, प्रश्न तो यह है कि क्या स्वामी जी को विष दिया गया या नहीं? लेखक ने बाबू देवेन्द्र नाथ मुखोपाध्याय जी, पंडित लेखराम जी, पं. गोपालराव हरि जी द्वारा लिखित स्वामी जी के जीवन चरितों का वर्णन करते हुए लिखा है कि इन सब ने स्वामी जी को दूध पी कर सोते हुए दिखाया है किन्तु इस दूध में विष था या नहीं, यह स्पष्ट किए बिना ही लिख दिया कि यह दूध था न कि विष अथवा काँच। लेखक को शायद यह पता नहीं कि राजस्थान में विष को काँच भी कहते हैं तथा दूध में भी विष हो सकता है।

जोधपुर के उस समय के राजा की कुटिलता को देखते हुए स्वामी जी को यह कहा भी गया था कि वह जोधपुर न जाएँ क्योंकि वहाँ का राजा कुटिल है, कहीं ऐसा न हो कि स्वामी जी को कोई हानि हो जाए। इससे भी स्पष्ट होता है कि जोधपुर जाने से पूर्व ही स्वामी जी की हानि होने की आशंका अनुभव की जा रही थी। अभी प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जी ने एक पुस्तक अनुवाद की है। पुस्तक का नाम है। महर्षि दयानंद सरस्वती सम्पूर्ण जीवन चरित्र लेखक पंडित लक्ष्मण जी आर्योपदेशक। यह विशालकाय पुस्तक मूलरूप से उर्दू में लिखी गई थी तथा प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जी ने इसका अनुवाद कर सन 2013 में ही दो भागों में प्रकाशित की है। इस पुस्तक में जिज्ञासु जी ने वह सामग्री भी जोड़ दी है, जो अब तक अनुपलब्ध मानी जाती थी। इस के साथ ही इस पुस्तक के अंत में महर्षि का विषपान अमर बलिदान नामक पुस्तक भी जोड़ दी है। प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु इस काल के आर्य समाज के सब से प्रमुख शोधकर्ता हैं, इस पर कहीं कोई दो राय नहीं। इसलिए जब वह लिख रहे हों महर्षि का विषपान अमर बलिदान तो यह स्पष्ट हो जाता है कि स्वामी जी के देहावसान का कारण, बलिदान का कारण विषपान ही था जिज्ञासु जी की पुस्तक के इस शीर्षक मात्र को देख कर ही कहीं अन्य किसी प्रकार की संभावना नहीं रह जाती । तो भी मैं यहां कुछ प्रमाण देकर स्पष्ट करना चाहूँगा कि स्वामी जी के बलिदान का कारण केवल और केवल विष ही तो था अन्य कुछ नहीं।

स्वामी जी को मृत्यु का भय न था

महर्षि का विषपान अमर बलिदान के आरम्भ के दूसरे पहरे में जिज्ञासु जी लिख रहे हैं कि स्वामी जी मृत्यु से डरते न थे। वह मरना और जीना समान जानते थे। प्रसंग दिया है कि विष दिए जाने से थोड़ा समय पहले ही एक महाराजा की रानी का देहांत हो गया। कुछ व्यक्ति दूरदर्शिता दिखाते हुए प्रेमपूर्वक कहते हैं कि आप भी थोड़ा शोक प्रकट करने चले जाएँ। ऋषि कहते हैं कि इस समय सांसारिक बंधन अपने पर कैसे लाद लूँ? मेरे लिए जीवन व मृत्यु एक समान है।

इतने वर्ष कैसे जी पाए?

सत्य का प्रचार करते हुए ऋषि के अनेक विरोधी बन गए। अनेक बार उन्हें विष दिया गया, पत्थर फैंके गए, साँप फैंके गए और न जाने क्या क्या हुआ किन्तु फिर भी वह इतने वर्ष तक जीवित रहे, यह भी एक आश्चर्य है। स्वामी जी को मृत्यु से लगभग दो वर्ष पूर्व ही अपनी मृत्यु का पूर्वानुमान हो गया था इस संबंध में उन्होंने एक पात्र के माध्यम से बारम्बार कर्नाला अल्काट को मेरठ में कहा था कि में सन् 1884 का वर्ष कदापि नहीं देख सकता ।

जोधपुर का स्वागत

जोधपुर जाते समय 28 मई 1883 को शाहपुराधीश को पत्र में लिखा था कि बीच के स्टेशनों पर पुकारने पर भी काई गाड़ीवान अथवा सिपाही नहीं था। यदि ऐसे व्यक्ति हैं तो राजकाज की हानि होगी। स्वामी जी के साथ चारण अमरदास थे। पं. कमलनयन का कथन है कि जाते समय किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति ने स्वामी जी को सचेत करते हुए कहा था कि महाराज वहाँ कुछ नरमी से उपदेश करना क्योंकि वह क्रूर देश है।

गर्ग जी ध्यान से पढ़िए यहाँ लक्ष्मण जी की कृति का अनुवाद करते हुए जिज्ञासु जी भी लिख रहे हैं कि प्रतिश्याय हो गया है। 29 सितम्बर अर्थात चतुर्दशी की रात्रि को धौड मिश्र रसोइए से (जो शाहपुर का रहने वाला) दूध पीकर सोए। उसी रात उदर शूल तथा जी मचलाने लगा...............30 सितम्बर को बहुत दिन निकले उठे। उठते ही पुनः वमन व जोर का शूल होने लगा, दस्त भी होने लगे संदेह होने पर अजवायन का काढा पीया। वैद्यक वाले बताते हैं कि अजवायन विष का प्रभाव दूर करने के लिए होती है। ......सत्यरूपी अमृत की चर्चा करते करते महर्षि को सांसारिक मनुष्यों से विषपान करना पड़ा। आह! वह 29 की रात्रि वाला दूध क्या था, मृत्यु का संदेश था। दूध में चीनी के साथ संखिया को बारीक पीस कर दिया गया था। इस रोग का ज्यों–ज्यों उपचार किया गया त्यों–त्यों बढ़ता गया। गर्ग जी क्या आपने कभी ऐसा प्रतिश्याय देखा है। जो वमन, दस्त व पेट शूल का कारण हो? नहीं तो फिर ऐसा झूठ क्यों गढ़ रहे हो?

इस रोग की जानकारी मिलने पर अच्छे चिकित्सक होते हुए भी अली मरदान खान को चिकित्सा का कार्य सौंप दिया गया। कहते हैं कि वह भी शत्रुओं की टोली का ही भाग था।............जो औषध दी गई उसके लिए बताया गया था कि तीन चार दस्त आवेंगे किन्तु रात्रि भर तीस से भी अधिक दस्त आ गए तथा दिन भर भी आते रहे। दस्तों से स्वामी जी इतने क्षीण हो गए कि उन्हें मूर्च्छा आने लगी। पाँच अक्तूबर तक अवस्था यहाँ तक पहुँच गई कि श्वास के साथ हिचकियाँ भी आने लगीं। जब स्वामी जी ने छः अक्तूबर को कहा कि अब तो दस्त बंद हाने चाहिए तो डाक्टर ने कहा कि दस्त बंद होने से रोग का भय है। बार–बार कहने पर भी दस्त बंद न होने दिए गए। इस प्रकार अली मरदान खान की चिकित्सा 16 अक्तूबर तक चली। इस मध्य दस्तों के कारण स्वास्थ्य बहुत बिगड़ गया। मुख, कंठ, जिह्व, तालू, सिर तथा माथे पर छाले पड़ गए। बोलने में भी कष्ट होने लगा। बिना सहायता के करवट लेना भी कठिन हो गया। चिकित्सा काल में उसका प्रतिपल प्रतिक्षण बढ़ते रहना किसी बिगाड़ उत्पन्न करने वाले पदार्थ का काम था तथा वह किसी संयोग से श्री महाराज की काया में जो पूर्ण ब्रह्मचर्य तप व सुधारणाओं सुगठित थी, प्रविष्ट हुआ? देश हितैषी पत्र अजमेर

यह पत्र लिखता है कि भ्रातृवृन्द! यह विचारने का स्थान है। न जाने यह किस प्रकार का विरेचन तथा औषधि थी। इस पर बहुधा मनुष्य कई प्रकार की शंका करते हैं और कहते हैं कि स्वामी जी ने भी कई पुरुषों और महाराजा प्रताप सिंह जी से इस विषय में स्पष्ट कह दिया था, परन्तु अब क्या हो सकता है? लाख यत्न करो। स्वामी जी महाराज अब नहीं आ सकते। जो हुआ, सो हुआ परन्तु हमको इतना ही शोक है कि स्वामी जी महाराज ने किसी आर्य समाज को सूचित न किया। यदि वह वृत्तान्त उस समय जाना जाता तो यह रोग इतनी प्रबलता को प्राप्त न होता।

जब स्वामी जी का स्वास्थ्य गिरता ही चला गया तो पं. देवदत्त लेखक तथा लाला पन्नालाल अध्यापक जोधपुर ने स्वामी जी से कहा कि यह स्थान छोड़ देना चाहिए। स्वामी जी ने इस संबंध में महाराज को लिखा। महाराज ने कहा कि इस दशा में यहाँ से जाने से जोधपुर की अपकीर्ति होगी किन्तु स्वामी जी के न मानने पर वह चुप हो गए। स्वामी जी की चिकित्सा शुश्रूषा करने वाले वही थे जो उनकी मौत ही चाहते थे। यदि जेठमल न

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

thearyasamaj.org

कुछ उपनिषदों से

● डॉ. सुशील वर्मा

महर्षि दयानन्द सरस्वती वेदों की उत्पति सृष्टि के प्रारम्भ से ही ईश्वर प्रदत्त स्वीकार करते हैं। तत्पश्चात् ब्राह्मण ग्रन्थ और फिर आरण्यक ग्रन्थ, अन्त में उपनिषद् ऋषिकृत्। उपनिषद् शब्द उप+ नि + सद् अर्थात उप और नि उपसर्गपूर्वक सद् धातु से अस्तित्व में आता है। इसका अर्थ हुआ – उप = समीप, नि = निश्चयपूर्वक, सद = बैठना। अर्थात तत्त्वज्ञान की प्राप्ति के लिए गुरु के समीप सविनय, एवं निष्ठापूर्वक बैठना। शंकराचार्य ने इसका अर्थ ब्रह्म विद्या कहा है। उनके अनुसार सद् धातु (षदलृ विशरणगत्यवसादनेषु) के तीन अर्थ है।

विशरण = नाश होना अर्थात संसार की मूलभूत अविद्या का नाश। गति = पाना अथवा जानना–अर्थात ब्रह्म की प्राप्ति अथवा उसका ज्ञान और तीसरे अवसादन = शिथिल होना जिससे मनुष्य के दु:ख अथवा बन्धन शिथिल होते हों। इन तीनों का समन्वय ही ब्रह्म विद्या का द्योतक है। वैसे तो उपनिषदों की संख्या 108 से लेकर 200 तक मानी जाती है। परन्तु आज ग्यारह उपनिषद् ही प्राप्य है। इनके नाम इस प्रकार है। ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक और श्वेताश्वतर। वास्तव में उपनिषद् के ऋषियों का लक्ष्य किन्हीं दार्शनिक रहस्यों पर ऊहापोह न करके अपने हृदय की अनुभूति को प्रकट करना रहा है। उपनिषद् मानव को अपने अन्दर झाँकने की अथवा अध्यात्म के प्रति अन्तर्मुख होने की प्रेरणा देते हैं।

उपनिषदों की आकर्षक एवं सरल शैली ने अध्यात्म विद्या के गहनतम रहस्यों को उजागर कर भारत में ही नहीं अपितु विदेशियों को भी बहुत प्रभावित किया। दाराशिकोह जो शाहजहाँ का पुत्र एवं औरंगजेब का भाई था, उसने 50 उपनिषदों को फारसी में अनुवाद सिर्र–ए–अकबर (महान रहस्य) नामक पुस्तक में 1657 ई. में किया। उसका यह मानना है कि कुरान में ''किताबिम मकनुनिन'' (छिपी हुई किताब) का उल्लेख है और यह छिपी किताब उपनिषद् ही है। दाराशिकोह के फारसी अनुवाद से Anquetil de Perran नामक फ्रांसीसी विद्वान ने 1802 ई. फ्रेंच और लेटिन में आउपनेखत Oupnekhat नाम से अनुवाद किया। वास्तव में आउपनेखत–उपनिषद् का ही विकृत रूप है। लेटिन अनुवाद के आधार पर ही प्रसिद्ध जर्मन दार्शनिक शोपेनहावर उपनिषदों के प्रति बहुत आकृष्ट हुआ। उसने उपनिषदों को ''मानवीय वैदुष्य की सर्वोत्तम कृति'' बताया। उसका कहना है इन उपनिषदों से मुझे अपने जीवन में अद्भुत शान्ति मिली है और मृत्यु के पश्चात भी मुझे ये शान्ति देती रहेंगी।''

उपनिषदों में दर्शन परस्पर विरोधी गुणों का समन्वय है। एक ओर ज्ञानमार्ग की उपयोगिता है तो दूसरी और कर्ममार्ग और भक्तिमार्ग की उपयोगिता। एक और प्रवृत्तिमार्ग है तो दूसरी और निवृत्तिमार्ग, एक ओर सर्वं खल्विदं ब्रह्म है तो दूसरी ओर द्वैत एवं त्रैत सिद्धान्तों का प्रतिपादन। अत: उपनिषदों की विशेषता यही है कि विवादास्पद विषयों पर ये समन्वय प्रस्तुत करते हैं एकांगी दृष्टिकोण हमेशा ही हानिप्रद होता है अत: दोनों पक्षों के गुणों को ग्रहण करना चाहिए। ज्ञान और कर्म दोनों का समन्वय अभीष्ट है, एक भौतिक जगत के लिए तो दूसरा अध्यात्म के लिए। वैसे तो समय–समय पर ज्ञाताओं एवं विद्वानों द्वारा उपनिषदों के विषयों में चर्चाएँ प्रस्तुत की जाती रही हैं। साधारणतया दो बड़े उपनिषद् छान्दोग्य एवं बृहदारण्यक पर चर्चा कम ही की गई है तो मेरा प्रयास है कि मैं अपनी तुच्छ बुद्धि से कुछ न कुछ इन उपनिषदों के विषयों पर अपनी बात करूँ। धन्य हैं ऋषि दयानन्द जिन्होंने सभी को शिक्षा प्राप्त करने की बात की और विशेष तौर पर नारियों के लिए। प्राचीन परम्परा में जहाँ उच्च कोटी के विद्वान हुए वहीं विदुषियाँ भी किसी से कम नहीं थी। जहाँ ऋषियों ने मन्त्र साधना की वहीं ऋषिकाओं को भी यह सौभाग्य प्राप्त हुआ। उसी श्रृंखला में बृहदारण्यक में वर्णित याज्ञवल्क्य एवं गार्गी का सम्वाद, जहाँ उनके वैदुष्य का परिचय देता है वहीं उपनिषद् की शिक्षाओं के प्रति हमारा ज्ञानवर्धन कराता है।

बृहदारण्यक उपनिषद् शतपथ ब्राह्मण के 14वें काण्ड का अन्तिम भाग है। यह उपनिषद् शुक्ल यजुर्वेद से सम्बन्धित है। जहाँ तक याज्ञवल्क्य गार्गी सम्वाद का सम्बन्ध है यह वार्ता तृतीय अध्याय के छठे ब्राह्मण एवं अष्टम ब्राह्मण से उद्धृत है। विदेहराज जनक ने बहु–दक्षिणा नामक यज्ञ किया जिसका उद्देश्य था कि सबसे अधिक विद्वान कौन है? इसके लिए उन्होंने एक हजार गौएँ जिनके दोनों सींगों में दस दस तोला सोना जड़ा था सर्वश्रेष्ठ ब्रह्म ज्ञानी को देने के निश्चय से उन्हें हाँक ले जाने को कहा। कोई भी ब्राह्मण इतना साहस न जुटा पाया कि वह इन गौओं को हाँक ले जाए। जब याज्ञवल्क्य ने अपने एक ब्रह्मचारी को उन्हे हाँक ले जाने का आदेश दिया। सभी उपस्थित ब्राह्मण क्रोधित हो गए और ललकार कर कहने लगे कि यदि तुम अपने आप को उच्चकोटि ब्रह्मज्ञाता समझते हो तो हमारे प्रश्नों का उत्तर दीजिए।

जनक के पुरोहित अश्वल के आठ प्रश्न पूछने के बाद आर्लभाग ने अनेक प्रश्न किए। तत्पश्चात भुज्यु ने और फिर उषस्त एवं चाक्रायण का विवाद हुआ। याज्ञवल्क्य तथा कहोल के विवाद के पश्चात वाचक्नवी गार्गी (वाचकुन की पुत्री) ने प्रश्न पूछने प्रारम्भ किए। हे याज्ञवल्क्य। यह पृथिवी चारों और से जल में ओतप्रोत है तो फिर जल किस में ओतप्रोत है? याज्ञवल्क्य का उत्तर था 'वायु में। फिर आगे प्रश्न कि वायु किस में ओत प्रोत है – अन्तरिक्ष, लोकों में। अन्तरिक्ष लोक किस में – गन्धर्व लोकों में, गन्धर्व लोक किस में – आदित्य लोकों में, आदित्य लोक किस में – चन्द्र लोकों में।, चन्द्रलोक किस में – नक्षत्र लोकों में, नक्षत्र लोक किस में–देव लोकों में, देवलोक किस में इन्द्र लोक में, इन्द्र लोक किस में–प्रजापति लोकों में, लोक किस में – ब्रह्म लोकों में तभी गार्गी ने प्रश्न किया कि जैसे कपड़े में ताना बाना होता है, तभी कपड़ा बना जाता है, सूत्र में मनके पिरोए होते है तभी माला रह सकती है तो फिर ये प्रजापति के लोक किस तरह कपड़े अथवा माला की तरह पिरोए हैं अथवा ओत–प्रोत हैं। याज्ञवल्क्य बोले हे गार्गी, अतिप्रश्न मत पूछ, कहीं तेरा सिर न फिर जाए। 'माऽतिप्राक्षीर्मा ते मूर्धा व्यपप्तद'' वह ब्रह्म देवता ऐसा है जिसके विषय में अति प्रश्न तो हो ही नहीं सकते। इस प्रकार गार्गी चुप हो कर बैठ गई।

इन प्रश्नों के विषय में चिन्तन किया जाए तो वास्तविक रूप में ये 33 देवताओं से सम्बन्धित हैं। 8 वसु, 11 रुद्र, 12 आदित्य, इन्द्र एवं प्रजापति कुल 33 देवता हं। वैदिक साहित्य में अग्नि, पृथिवी, वायु अन्तरिक्ष, आदित्य, देवलोक, चन्द्र, नक्षत्र–आठ वसु हैं। इनमें अग्नि का वास पृथिवी में वायु का अन्तरिक्ष में, आदित्य का देवलोक (द्युलोक) में चन्द्र का नक्षत्र लोक में है। दस इन्द्रियाँ अर्थात् दस देव (पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ) तथा ग्यारहवाँ मन – रुद्र हैं। बारह माह बारह आदित्य हैं। गार्गी ने अग्नि के स्थान पर जल को रखा क्यों कि अग्नि इस प्रकार फैली नहीं पाई जाती जिस प्रकार जल चारों ओर फैला हुआ है। उन्होंने पृथिवी, जल, वायु अन्तरिक्ष इस क्रम में प्रश्न किए हैं। इसी प्रकार गन्धर्व, आदित्य, चन्द्र, नक्षत्र का क्रम लिया है। ये तो आठ वसु हैं और इसी प्रकार 11 रुद्रों को देव, इन्द्र प्रजापति और ब्रह्म के सम्बन्ध में प्रश्न किए। क्योंकि इन्द्रियों को उपनिषद् में देव कहा जाता है। सारांश यह कि 33 के 33 देवता ब्रह्म में ही माला के मनकों की तरह पिरोए हुए हैं, इनमें से कोई भी स्वतन्त्र नहीं है। गार्गी के पश्चात् उद्दालक का विवाद हुआ। एक बार फिर गार्गी ने फिर कहा कि मेरे दो प्रश्नों का उत्तर दें।

गार्गी ने प्रश्न किया है याज्ञवल्क्य! द्यु से जो ऊपर है, पृथिवी से जो नीचे है द्यु और पृथिवी के बीच में जो है, जिसे भूत–भवत् भविष्यत् कहा जाता है वह सब किस में ओत–प्रोत है। याज्ञवल्क्य का इस के प्रति उत्तर था वह आकाश में ओत प्रोत है। एक प्रश्न के उत्तर के बाद इसने पूछा कि वह आकाश किस में ओत–प्रोत है याज्ञवल्क्य का उत्तर था कि हे गार्गी जिसमें आकाश ओत–प्रोत है इसे ब्रह्मवेत्ता लोग 'अक्षर' कहते है। वह 'अक्षर'– अविनाशी तत्त्व–न स्थूल है, न अणु है ह्स्व है न दीर्घ है। न अंगारे की तरह लोहित है, न घी की तरह स्निग्ध। न छाया है न तम है न वायु है। न आकाश है। यह तल असंग है, अरस है अगंध है, अचुक्ष है, अश्रोत्र है, वाक रहित, मन रहित, तेज रहित, प्राण रहित, मुख रहित, मात्रा रहित। इस अविनाशी तत्त्व के न कुछ भीतर है, न बाहर है न वह किसी को खाता है, कोई उसे खाता है।

इसी 'अक्षर' के शासन से सूत्र में बँधे, सूर्य चन्द्र अपने 2 नों में ठहरे हुए हैं। इसी शासन सूत्र में बँधे निमेष, मुहूर्त, रात्रि, अर्ध, मास, ऋतु सम्वत्सर ठहरे हुए हैं जो इस अक्षर को जानकर इस लोक से प्रयाण करता है। वह ब्राह्मण है– ब्रह्मवेत्ता है। इस प्रकार गार्गी ने कहा कि इस ब्रह्मवेत्ता का नमस्कार कर के छूट जाओ, तुम में से इसे कोई जीत न सकेगा। इस प्रकार यह कथा हमें 33 देवताओं के विषय में ज्ञान दे रही है।

गली मास्टर मूल चंद वर्मा
फाजिल्का – 152123 (पंजाब)

thearyasamaj.org

मनुष्य के ऊपर ईश्वर ने किए अन्य योनियों से अधिक उपकार

● खुशहाल चन्द आर्य

वैसे तो ईश्वर के मनुष्य के ऊपर अन्य योनियों से बहुत अधिक उपकार हैं, पर यहाँ कुछ उपकारों का वर्णन संक्षेप में कर रहें हैं। वे इस भाँति हैं:–

मनुष्य सब से उत्तम व अन्तिम योनि है:– वैसे तो ईश्वर को छोड़ कर किसी को ज्ञात नहीं कि पूरी सृष्टि में कितनी योनियाँ हैं। परन्तु हमारे ऋषि–मुनियों ने अन्दाज से चौरासी लाख योनियाँ मानी हैं। जिनमें मनुष्य योनि सब से उत्तम योनि सर्वश्रेष्ठ है, साथ ही वह ईश्वर की अन्तिम कृति भी है। इसके बाद ईश्वर ने कोई योनि नहीं बनाई कारण जीव था अन्तिम लक्ष्य जो मोक्ष प्राप्त करना है, वह इसी योनि में सम्भव है। यदि जीव इस योनि में आकर भी अपने गुणों से, अपने परिश्रम से, अपने संयम व सदाचार से, अपने ज्ञान से, अपनी यज्ञीय भावना से मोक्ष प्राप्त नहीं कर सका तो फिर उसे या तो निम्न योनि पशु–पक्षी, कीट–पतंग, कीड़े–मकोड़े या पेड़–पौधों की योनि में जाना पड़ेगा या फिर किसी मनुष्य योनि में अच्छी या बुरी, धनी या गरीब, राजा या रंक, विद्वान या मूर्ख आदि मनुष्य के घर पैदा होना पड़ेगा। इसके लिए भी यह अन्दाजा लगाया गया है कि जब जीव मनुष्य योनि में आता है तब वह अपने जीवन में 50% पचास परसेन्ट या इससे अधिक शुभ यानि पुण्य कर्म करेगा तब वह मनुष्य योनि में जाएगा। पचास परसेन्ट से वह जितने अधिक शुभ कर्म करेगा उसे उतनी ही उत्तरोत्तर अच्छी मनुष्य योनि मिलनी चाहिए और जब वह अपने पूरे जीवन में अच्छे कर्म ही करेगा गीता की भाषा में निष्काम कर्म करेगा, परोपकार के काम निःस्वार्थ भाव से करेगा, साथ ही अष्टांग योग को करते हुए समाधि तक पहुँच जाएगा तब वह व्यक्ति मरने के बाद मोक्ष को प्राप्त करेगा। मोक्ष की स्थिति में वह जीव 31 नील 10 खरब 40 अरब वर्षों तक ईश्वर के सान्निध्य में रहता हुआ परम आनन्द को प्राप्त करता रहेगा। इसके बाद वह पुनः धरती पर अच्छी मनुष्य योनि में आ जाएगा और उसकी जीवन यात्रा पुनः आरम्भ हो जाएगी। ऋषि दयानन्द के अनेक अन्य उपकारो में एक यह उपकार भी है कि उन्होंने वेदों के आधार पर मोक्ष की अवधि बताई। इससे पहले मोक्ष यानि मुक्ति का अर्थ ही यह होता था कि वह जीव सदा–सदा के लिए जीवन–मरण से मुक्त हो गया। परन्तु महर्षि ने ही बताया कि मोक्ष अच्छे कर्मों का फल है। यदि कर्म करने की कोई अवधि है तो फल की अवधि भी अवश्य होगी, चाहे वह कितनी भी लम्बी हो, पर अवधि अवश्य होगी। इसी आधार पर महर्षि ने यह अवधि निर्धारित की । इसी लिए मनुष्य योनि सर्वश्रेष्ठ व अन्तिम होने के साथ–साथ यह मोक्ष प्राप्ति का द्वार भी है। अन्य योनियों से जीव मोक्ष को प्राप्त नहीं कर सकता। इसी विषय को आगे बढ़ाते हुए लिख रहे हैं कि जो मनुष्य पचास परसेन्ट से जितने अधिक बुरे काम यानि पाप कर्म करेगा, उसको उसी हिसाब से निम्न से निम्नतर योनि मिलती जाएगी। यहाँ मैं यह बात भी बतलाना चाहता हूँ जो मेरा स्वयं का विचार है, किसी विद्वान की लिखी पुस्तक में नहीं पढा है कि एक मनुष्य योनि ही कर्म योनि है यानी सभी योनियाँ भोग योनि हैं। उनमें किए कर्मों का फल जीव को नहीं मिलता। इसलिए जीव जब मनुष्य योनि से निकलता है तब वह कितनी भोग योनियों में हो कर पुनः कब मनुष्य योनि में आएगा, इसका निर्धारण जीव का मनुष्य योनि छोड़ते समय हो जाता है। बाद में निर्णय लेने का अवसर ही नहीं मिलता। विद्वानों से मेरी विनती है, वे इस विषय पर विचार करें। अकाल मृत्यु के बारे में यहाँ लिखना जरूरी है कि अकाल मृत्यु के बाद मनुष्य का क्या होता है। इसके लिए मैंने पूज्य आचार्य आर्य नरेश जी की लिखी एक पुस्तक पढ़ी थी, उसमे उन्होंने लिखा था कि किसी मनुष्य की अकाल मृत्यु उसकी आयु से तीस वर्ष पहले हो गई तो ईश्वर उसको जो अगली योनि देगा उसमें उसके कर्मानुसार उसकी आयु घटा या बढ़ा देगा। यह बात कुछ समझ में आती है।

मनुष्य योनि भोग तथा कर्म दोनों योनि हैं:– मनुष्य को छोड़ कर बाकी सभी योनियाँ केवल भोग योनियाँ हैं। इनमें जीव जितने दिन रहेगा वह भोग ही करता रहेगा और उसके किये हुए कर्मो का उसे कोई फल नहीं मिलेगा। योग योनि का तात्पर्य है जीव अपने जीने के लिए जो कर्म बहुत जरूरी हैं वह करेगा यानि खाना–पीना, सोना–जागना, उठना–बैठना, लड़ना–झगड़ना तथा बच्चे पैदा करना आदि। परन्तु मनुष्य भोग योनि के साथ–साथ कर्म योनि भी है। कर्म योनि का तात्पर्य है कि मनुष्य को उसके किए कर्मों का ईश्वर की न्याय व्यवस्था के अनुसार फल मिलता है। इसी के आधार पर मनुष्य को दूसरी योनि या मोक्ष मिलता है।

मनुष्य के पास स्वाभाविक व नैमित्तिक दोनों ज्ञान होते हैं:– स्वाभाविक ज्ञान वह ज्ञान है जिससे जीव अपना जीवन चलाने के लिए जो बहुत जरूरी काम करता है, जैसे सोना–जागना, खाना–पीना आदि। इन कर्मों का जीव को फल नहीं मिलता, जैसा कि भोग योनि में बतला आए हैं। दूसरा ज्ञान है नैमित्तिक ज्ञान जो सिखाने से सीखा जाता है। यह ज्ञान मनुष्यों में अधिक और पशु–पक्षियों में बहुत कम होता है। स्वाभाविक ज्ञान पशु– पक्षियों में अधिक और मनुष्यों में कम होता है। तैरना पशु–पक्षियों के लिए स्वाभाविक ज्ञान है इसीलिए कुत्ता का बच्चा पैदा होते ही पानी में तैर कर निकल जाता है। मनुष्य के लिए तैरना नैमित्तिक ज्ञान है इसीलिए मनुष्य के बच्चे को तैरना सीखना पड़ता है तभी वह तैर सकता है अन्यथा वह पानी में डूब जाएगा। मनुष्य अपने नैतित्तिक ज्ञान के आधार पर ही सभी कलाओं व विद्याओं को सीखता है तभी वह कलाओं में निपुण और विद्वान बनता है। इसीलिए सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर ने मनुष्यों के लिए चार वेद बनाए जिनके नाम ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद हैं। ये चारों वेद चार ऋषियों, जिनके नाम अग्नि,वायु, आदित्य व अँगिरा थे, उनके मुख से क्रमशः उच्चारित करवाए यानि उनके हृदय में क्रमशः एक–एक वेद का ज्ञान प्रकाशित किया। यह ज्ञान, ईश्वर प्रदत्त ज्ञान था। ईश्वर ने यह ज्ञान ऋषियों के हृदय में प्रकाशित करके, केवल उनके मुख से उच्चारित करवा दिया। वह वेद ज्ञान ईश्वर ने केवल मनुष्यों के लिए ही दिया है, जिनको पढकर यह जान सके कि उसे क्या काम करना चाहिए और क्या काम नहीं करना चाहिए। इस बात को जानकर तथा वेदानुकूल चल कर मनुष्य अपने अन्तिम लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त कर सके। इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए जीव अपने पुण्य कर्मों के बल पर मनुष्य योनि में आता है और वह वेदानुकूल चलने से ही मोक्ष प्राप्त करता है।

मनुष्यों को कर्म करने की स्वतन्त्रता:– ईश्वर ने मनुष्य को यदि कोई सब से बड़ी उपलब्धि,पुरस्कार या वरदान दिया है तो वह है कर्म करने की स्वतंत्रता। साथ ही उसे नियन्त्रण में रखने के लिए कर्मों का फल देना अपने हाथ में रखा है। यानि मनुष्य कार्य करने में स्वतन्त्र और फल पाने में ईश्वर की न्याय व्यवस्था के अनुसार निष्पक्ष भाव से, बिना किसी भेद–भाव को रखे अच्छे का सुख के रूप में और बुरे का दुःख के रूप में फल देता है। मनुष्य भोग योनि के साथ–साथ कर्म योनि भी है इसीलिए उसको कर्म करने की स्वतन्त्रता मिली है। मनुष्य जैसा भी शुभ या अशुभ कर्म करता है, उसका फल ईश्वर सुख दुःख के रूप में इसी जीवन में या अगली योनि में भेज कर देता है।

ईश्वर द्वारा मनुष्य को बुद्धि, वाणी तथा दो हाथ विशेष दिए हैं:– ईश्वर ने मनुष्य को अन्य योनियों से बुद्धि अधिक दी है जिससे वह अच्छे, बुरे की जाँच कर सके। वाणी विशेष दी है जिससे वह अपनी बात दूसरों को समझा सके। तथा कर्म करने के लिए दो हाथ दिए हैं जिससे वह शुभ कर्म करते हुए परोपकार कर सके और दान दे सके। इन तीनों का मनुष्य उपयोग भी कर सकता है और दुरुपयोग भी कर सकता है। कारण, मनुष्य कर्म करने में स्वतन्त्र है। बुद्धि से मनुष्य वेदों का ज्ञान भी प्राप्त कर सकता है जिससे वह अपने जीवन को मोक्ष प्राप्ति के लिए अग्रसर कर सकता है और इसी बुद्धि से चोरी व ठगी भी कर सकता है। वाणी से वेद व अन्य ज्ञान की पुस्तकें भी पढा सकता हैं, और पढ़ सकता है और इसी वाणी से गाली व किसी की निन्दा भी कर सकता है। दो हाथों से मनुष्य किसी को मार भी सकता है और इन्हीं दोनों हाथों से किसी असहाय को सहारा भी दे सकता है। इसलिए मनुष्य का कर्त्तव्य है कि ईश्वर ने उसके अच्छे कर्मों के आधार पर मनुष्य योनि में भेजा है और वेदों में शिक्षा दी है कि "मनुर्भव" हे मनुष्य! तू मनुष्य बन, मानव बन, यानि तू पशु–पक्षियों की योनि से आया है इसलिए तेरे संस्कार, विचार, व्यवहार व स्वभाव पशु–पक्षियों जैसा है, अब तू अच्छे संस्कारों से सुसंस्कारित होकर मनुष्य के गुणों को धारण करके सच्चा मानव बन यानि तुमको ईश्वर ने वेद ज्ञान दिया है, तू उनके अनुसार चल कर अपने जीवन को उन्नत करते हुए सफल बना और जीवन का जो अन्तिम लक्ष्य है, मोक्ष प्राप्त करना, उसे प्राप्त करने का जीवन भर प्रयत्न कर।

180 महात्मा गान्धी रोड
(दो तल्ला) कोलकता –700007
फोन न. 22183825,64505013

thearyasamaj.org

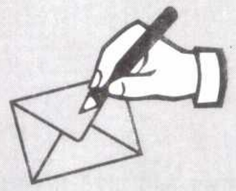

पत्र/कविता

सम्पूर्ण आर्य जगत् को भारत सरकार को निम्न प्रस्ताव भेजने चाहिएं

आर्य श्रेष्ठ सन्यासियों, वानप्रस्थियों, विद्वानों एवं नेतृत्व, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभाओं के पदाधिकारियों व प्रसिद्ध उद्योगपतियों से विनम्र निवेदन है कि वैदिक सिद्धान्तों के लिये महर्षि दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, पं० लेखराम आदि मनीषियों ने अपना जीवन बलिदान कर दिया था। उनका ऋण हम आर्यों के ऊपर है। वर्तमान समय हमारे अनुकूल हो सकता है यदि आज हम अपनी हटधर्मी, पदवाद, सम्पत्तिवाद, आपसी कलह द्वेष भावना को समाप्त करके, एक सार्वदेशिक सभा एक प्रतिनिधि व उपप्रतिनिधि सभा बनायें आज सन्ध्या के मंत्र "योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः तं वो जम्भे दध्मः" को सार्थक करने का समय आ गया है। आइए हम एक रूपता से संगठित होकर भारत सरकार से निम्न माँगों का प्रस्ताव करें–

क्योंकि भारत के प्रधानमंत्री आदरणीय मोदी जी अधिकांश वैदिक सिद्धांतों से परिचित हैं व आर्य समाज द्वारा राष्ट्रीय बलिदान व समाज सुधार के कार्यों को भी जानते हैं।

प्रस्ताव नं० 1

आर्य बाहर से भारत में आये, शिक्षा क्षेत्र में पाठ्यक्रम से हटाने का प्रस्ताव

टिप्पणी– 1857 से 1947 तक राष्ट्रीय स्वतन्त्रता आन्दोलन में महर्षि दयानन्द की प्रेरणा व आर्य समाज से प्रेरित लाखों वीरों ने अपना बलिदान दिया था। तत्कालीन अंग्रेज गवर्नर लार्ड मैकाले ने उस समय दुहरी चाल चली। वह जानता था कि आर्य समाजी राष्ट्रभक्त, ईश्वर भक्त, चरित्रवान व सदाचारी होते हैं। आर्यों को अन्य भारतीयों के निगाहों से गिराना चाहिए। एक तीर से दो शिकार उसने करने की सोची। उसने शिक्षा पद्धति में पाठ्यक्रमों में लगा दिया कि आर्य भारत में बाहर से आये हैं। कितना सफेद झूठ व गहन षडयन्त्र था, चल रहा है व आर्य समाज के माथे पर दाग है। आर्य अर्थात सम्पूर्ण भारतवासियों की यह जन्म भूमि, कर्म भूमि और धर्मभूमि है। सभी महापुरूषों ने इसी धरती पर जन्म लिया है।

प्रस्ताव नं० 2

सत्यार्थ प्रकाश 11 सम्मुलासों को एक जिल्द में भारत के पाठ्यक्रम में लाना होगा–

टिप्पणीः

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने मानव मात्र को, आदर्श मनुष्य, चरित्रवान, संस्कारवान, राष्ट्रभक्त, पितृ भक्त व ईश्वर भक्त बनाने के लिये कालजयी ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश 1874 में लिखा था और आर्ष क्रान्ति का मूल स्रोत सत्यार्थ प्रकाश में 377 आर्ष ग्रन्थों का उदाहरण व 1542 वेद मंत्रों के उदाहरण दिये हैं। इसमें 11 सम्मुलासों में आर्ष वैदिक धर्म, आर्ष राष्ट्र नेतृत्व, आर्ष संस्कार व आर्ष ईश्वर भक्ति की शिक्षायें हैं, जो सम्प्रदायिक नहीं है अपितु सम्पूर्ण मानव मात्र के लिये है। यदि सत्यार्थ प्रकाश भारत के शिक्षा पद्धति में शामिल हो गया तो कालान्तर में भारत का इतिहास बदल जायेगा।

प्रस्ताव नं०–3

राष्ट्र प्रपितामह महर्षि दयानन्द सरस्वती के जन्म दिवस पर राष्ट्रीय अवकाश घोषित करना चाहिए। वैकल्पिक अवकाश समाप्त करना चाहिए।

टिप्पणी– ईश्वरीय वाणी वेदों की ओर लौटाने वाले और आर्ष सिद्धांतों के प्रतिपादन एवं राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के मूल स्रोत महर्षि दयानन्द सरस्वती जी थे। सम्पूर्ण धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक भ्रष्टाचारों को समाप्त करने हेतु उन्होंने अपना जीवन बलिदान दिया था। भारत सरकार को ऐसे युग पुरुष को प्रथम पंक्ति में रखना चाहिए। हमारी जोरदार मांग होनी चाहिए।

प्रस्ताव नं०–4

देवी देवताओं के नाम पर निरीह पशुओं की बलि कानूनन बन्द होनी चाहिए–

प्रस्ताव नं०–5

सम्पूर्ण भारत में शराब बन्द होनी चाहिए या शराब इतनी महंगी हो, जिसको सामान्य व्यक्ति पीने की सोच भी न सके तथा बीड़ी, सिगरेट, गुटका, तम्बाकू पर भारी टैक्स लगना चाहिए।

प्रस्ताव नं०–6

सह शिक्षा व वेलिंगटाइन डे आदि पाश्चात्य संस्कारों से ओत प्रोत कार्यो पर प्रतिबन्ध लगना चाहिए।

आर्य नेतृत्वों से निवेदन

1. वर्तमान में हमें सम्पूर्ण आर्य समाज को एकरूपता करनी होगी।
2. आर्य समाज को स्वयंवर विवाह सामूहिक विवाह के आयोजन करने चाहिएँ।
3. विष वेल की तरह फैल रहे धार्मिक अन्धविश्वास, जैसे भागवत कथाएं, माता जागरण के विचारों को रोकने के लिए बड़ी लकीर खींचनी होगी अर्थात् व्यापक रूप में वेद कथाओं का आयोजन करने होंगे।
4. उच्च कोटि के आर्य संन्यासियों की एक धर्म सभा बनानी चाहिए और सम्पूर्ण आर्य जगत् उसी सभा के नेतृत्व मे अपनी–अपनी सभाओं द्वारा कार्य करें।
5. आर्य समाजों को केवल यज्ञ याग में ही न लिपटकर चारदीवारी से बाहर आकर वेद प्रचार करना होगा।
6. आर्य समाजियों को अपने नाम से जातिवाचाक शब्द हटाना होगा और प्रयास करें कि आर्य परिवारों में ही आपसी विवाह सम्बन्ध हों।

संग्राम है, जिन्दगी लड़ना इससे पड़ेगा।
जो लड़ नहीं सकेगा, आगे नहीं बढ़ेगा।

पं० उम्मेद सिंह विशारद
गढ़ निवास मोहकमपूर
(देहरादून)
मो०–9411512019

****

वह आर्य समाज निर्विघ्न बढ़े

वैदिक संस्कृति के प्रचार प्रसार और
रक्षा का जो निश्चित प्रयत्न करे।
सबल समर्थ होकर हर विधि से, वह आर्य समाज निर्विघ्न बढ़े।।

प्रभु प्रदत सद्ज्ञान श्रुति का
ऋषियों का वरदान बुद्धि का।
अभ्यासी बन कर तप करके,
करे निरन्तर ज्ञान वृद्धि का
भेद भाव को बिन उकसाये वह प्रयास अत्यन्त करे।।
वह आर्य समाज निर्विघ्न बढ़े।।

भूमि–भवन–आधुनिक सुविधा,
कोष, कार्यकर्त्ता, धन सम्पदा।
कम भी हो तो कोई हर्ज ना
झिल–मिल युवा वृद्ध बालक का
सामञ्जस्य निशिदिन श्रद्धा से तन्मय हो प्रबन्ध करे।।
वह आर्य समाज निर्विघ्न बढ़े।।

मृदु भाषी–सुख दुःख समदर्शी
वक्ता सहज सरल हृदस्पर्शी।
एक दूजे के हित चिन्तन में
लगे निरन्तर तज कर कुर्सी
झगड़ा–फसाद–तिकड़म से बचकर, यज्ञ तुल्य सुगन्ध करे।।
वह आर्य समाज निर्विघ्न बढ़े।।

ग्राम शहर तहसील राज्य में
अन्योन्यश्रित हो सुकाज में जमकर अडिग कार्यपूर्ति तक
खोट ना ढूँढ़ें तलख आवाज में
कायाकल्प–संगठन की चिन्ता, उत्तम पुरुषार्थ का ढंग करे।।
वह आर्य समाज निर्विघ्न बढ़े।।

सत्यदेव प्रसाद आर्य 'मरुत'
आर्य समाज नेमदारगंज
(नवादा–बिहार)

thearyasamaj.org

पृष्ठ 07 का शेष

विष ही महर्षि की मृत्यु....

जाते तो स्वामी जी का देहांत तो जोधपुर में ही हो जाता और संस्कार की सूचना भी आर्यों को न होती। जेठमल जी ने अजमेर जा कर सभासदों को सूचित किया। पीर जी हकीम को सब बताया, उन्होंने कुछ औषध दी तथा बताया कि स्वामी को संखिया दिया गया है। (देखें महर्षि का विषपान अमर बलिदान) पीर जी को औषध से कुछ लाभ मिला। मूर्छा और हिचकी कम हो गई। हस्ताक्षर करने लगे। आबू में डॉ. लक्ष्मण दास जी के उपचार से भी लाभ हुआ। हिचकियाँ व दस्त बंद हो गए किन्तु 23 अक्तूबर को त्याग पत्र देने पर भी कड़ाई बरतते हुए अजमेर भेज दिया। मार्ग में मिलने वालों को आप सजल नेत्रों से स्वामी जी का हाल सुनाते थे। यहा से स्वामी जी को अजमेर लाया गया। स्वामी जी के पूरे शरीर में छाले पड़ गए थे तथा सर्दी में भी गर्मी का अनुभव करते थे।

अजमेर आने पर पीर जी ने जाँच करके स्पष्ट कहा कि विष दिया गया है। स्वामी जी ने जल पीया, कटोरे में मूत्र किया जो कोयले के समान काला था। प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जी इस जीवन चरित्र के इतिहास दर्पण के अंर्तगत पृष्ठ 655 पर लिखते है कि ऋषि जब जोधपुर जाने लगे तो सभी शुभचिंतकों ने वहाँ जाने से रोका। प्राणों के निर्मोही दयानंद ने किसी की एक न सुनी। शीश तली में रखकर जोधपुर जाने की ठान ली।

1. ऋषि के जोधपुर पहुँचने के 26 दिन बाद जसवंत सिंह महाराज जोधपुर दर्शनार्थ पधारे। यह भी एक समझने वाला तथ्य है।

2. शाहपुरा के श्री नाहर सिंह तथा अजमेर के कई भक्तों ने कहा कि आप वहां जा रहे हैं। वेश्यागमन, व्यभिचार का खंडन मत करना। यह तथ्य भी सामने रखना होगा। तथा ऋषि ने इन्हें जो उत्तर दिया वह भी ध्यान में लाना होगा।

3. महाराजा प्रताप सिंह के जीवन चरित्र में भी स्वामी जी का कहीं वर्णन तक न होना भी इस बात को बल देता है। यहाँ तक कि उनके किसी लेख में स्वामी जी का नाम तक नही मिलता।

4. सर प्रताप सिंह अंग्रेजों का पिट्ठू था, ऋषि भक्त नहीं। अंग्रेजों ने अपने सब से बड़े चाटुकार निजाम हैदराबाद से भी कहीं अधिक उपाधियाँ सर प्रताप सिंह को दीं। ऋषि भक्त पर तो अंग्रेज मोहित नही हो सकता था।

5. राजा के सब चाकर आज्ञाकारी और विश्वस्त होते हैं। महर्षि तो शाहपुरा के दिए सब चाकरों को निकम्मा बताते हैं। यह बात ऋषि दयानंद के पात्र और विज्ञापन के पृष्ठ 422–423 पर अंकित है।

6. जिस डॉ. अलीमर्दान खान से जोधपुर में उपचार कराया गया था, वह चाटुकार तथा तृतीय श्रेणी का सहायक डाक्टर था। उसने जानबूझ कर ऐसा उपचार किया कि स्वामी जी बच न सकें।

7. ऋषि की रुग्णता का समाचार बाहर न निकालने देना भी उनके दोष का कारण रहा। महर्षि की सारी योजना बनाने वाला राजपरिवार मजे से महलों में सोता रहा। स्वामी जी को रोग शैय्या पर छोड़ महाराजा प्रताप सिंह घुडदौड़ के लिए पूना चले गए।

8. स्वामी जी को अंतिम समय अजमेर लाने वाले जेठमल जी ने कविता में लिखा रोम–रोम में विष व्याप्त हो गया। यह तो साक्षात सत्य है जिसने अपनी आँखों से देखा उसको ही लिखा है।

9. जब पंडित लेखराम जी स्वामी जी के जीवन की खोज में जोधपुर गए तो राजा के गुप्तचर छाया की तरह पंडित जी के पीछे क्यों रहे? खोज में बाधा क्यों डाली?

10. सर प्रताप सिंह स्वयं कहते थे....... कोई नन्हीं को भगतन व वैष्णव बताकर सिद्ध करने में लगा है। तो काई जोधपुर में विष देने की घटना को सिरे से खारिज कर रहा है। राजपरिवार का एक ट्रस्ट है। उन्होंने मुठ्ठी में कई लेखक कर रखे हैं। ऐसा सुनने में आया है। एक दैनिक में विषपान की घटना को प्रचारित करने का दोष पंजाब के महात्मा दल पर लगाया गया।

झूठ झूठ ही होता है।

जब राजस्थान के एक दैनिक में यह लेख छपा तो राजस्थान के किसी व्यक्ति ने इस मिथ्या कथन का प्रतिवाद नहीं किया। तब प्रा. राजेन्द जिज्ञासु जी ने लिखा कि पं. लेखराम जी का ग्रन्थ छपने से पूर्व जोधपुर में अकाल पड़ा था। तब लाला लाजपत राय जी ने लाला दीवानचंद को जोधपुर सहायता कार्य के लिए भेजा। उस समय सर प्रताप सिंह ने स्वंय जोधपुर में ऋषि जी को विष देने की घटना पर बड़ा दुःख प्रकट किया था। यह बात लाला दीवानचंद जी की आत्मकथा 'मानसिक चित्रावली' में दी गई है। इस दीवान चांद ने दुनिया के नौ महापुरूष नामक उर्दू पुस्तक में ऋषि को जोधपुर में विष दिए जाने की चर्चा की है नन्हीं को भी वैश्या लिखा है।

12. राजस्थान के यशस्वी इतिहासकार गौरी शंकर हीराचंद ओझा ने भी ऋषि के बलिदान का कारण विषपान ही माना है। यह सब दयानंद मेमोरियल वाल्यूम के पृष्ठ 370 पर देखें। राधास्वामी मत दयालबाग के गुरु हूजूर जी महाराज भी लिखते हैं कि जसवत सिंह की बद्खुला तवायफ नन्हीं जान।...... नन्हीं जान के प्रतिशोध का परिणाम था कि दयानंद के दूध में विष पीस कर शक्कर डाल कर दिया गया और वह घातक सिद्ध हुआ।

13. अजमेर के हकीम पीर अली जी ने स्पष्ट कहा था कि संखिया दिया गया है।

14. राजस्थान के तत्कालीन इतिहासकार जगदीश सिंह गहलोत, मुंशी देवी प्रसाद, नैनुरम ब्रह्मभात आदि सब एक स्वर में ऋषि के बलिदान का कारण विष मानते हैं। चॉद के प्रसिद्ध मारवाड़ी अंक से ऋषि के विषपान के प्रमाण जिज्ञासु जी ने दिए थे।

15. ऋषि को मारने के षड्यंत्र में कई व्यक्ति सम्मिलित थे। इन में से एक व्यक्ति खुल्लमखुल्ला ऋषि की हलाकत (हत्या) का श्रेय लेते हुए गर्व से लिखता है कि उसे तो अल्लाह से ऋषि के मारे जाने की पहले से जानकारी मिल चुकी थी। मिर्जई मत का पैगम्बर मिर्जा गुलाम अहमद कादियानी ऋषि की हकालत को अपनी कर नुब्बुवत का आसमानी निशॉ प्रमाण आ गया था। उसने अपनी आसमानी किताब हकीकत उल वाही के 51–52 पृष्ठों की निर्देशिका के पृष्ट 24 पर दो बार महर्षि के मरवाने का श्रेय बड़ी शान से लिया है। इस पंथ का पालन पोषण अंग्रेज सरकार ने किया।

16. श्री राम शर्मा ने कुतर्क दिया की गोपालराव हरी ने ऋषि जीवन में विष देने की चर्चा नहीं की। क्या इससे एक सरकारी अधिकारी की विवशता नहीं दिखती, जबकि मौके के इतिहासकार जो उस समय जोधपुर व अजमेर में थे, की साक्षी असत्य हो जाती है क्या?

17. लाखों की सम्पदा रखने वाली नन्हीं पर जब विष देने का आरोप लगाया गया, यह आरोप लगाने वालों में महात्मा मुंशी राम, मास्टर आत्माराम, लक्षमण जी, महाशय कृष्ण जी आदि पर उसने मानहानि का अभियोग क्यों नहीं किया?

18. भक्त अमीचंद को यह क्यों लिखना पडा:

अमीचंद ऐसा होना कठिन है, धर्म न हारा।

कष्ठ उठाए, न घबराये, उदर वश खाई।।

महर्षि का विषपान अमर बलिदान में दी गई कविता की अंतिम पंक्ति इस प्रकार है।

दियो विष हा हा हा स्वामी म्हारो चलि बसो।

19. बम्बई की एक मेडिकल संस्था ने भारत सरकार के अनुदान से डॉ. सी के पारिख का एक ग्रन्थ सिम्पलिफाईड टेक्स्ट बुक ऑफ मेडिकल ज्युरुपुदेंस एंड टेक्नोलॉजी प्रकाशित करवाया है उसके पृष्ठ 643,673, 674 पर बड़े विस्तार से विष दिए जाने पर शरीर में होने वाली प्रतिक्रियाओं का वर्णन कीया गया है। कोई भी सत्यान्वेषी उन्हें पढ़ कर यही निर्णय देगा कि महर्षि जी महाराज को अंतिम दिनों में जिन शारीरिक व्याधियों का कष्ट भोगना पड़ा वे सब विष दिए जाने के कारण उत्पन्न हुई।

विश्वबंधु शास्त्री तथा श्रीराम शर्मा, दोनों ही मूलराज को अपना गुरू मानते हैं किन्तु मूलराज जैसे कुटिल ऋषि द्रोही ने मरते दम तक कभी यह नहीं कहा व लिखा कि ऋषि को विष नहीं दिया गया। यहाँ तक कि महर्षि को विष देने के विरोधी श्रीराम शर्मा द्वारा शोलापुर से प्रकाशित प्रा. बहादुर मॉल की एक पुस्तक से विष दिए जाने के प्रमाण प्रकाशित किये। इससे भी उनके दोहरे चरित्र का पता चलता है। होशियारपुर के विश्वबंधु, सूर्यभान कुलपति की पुस्तकों में भी विषपान की घटना निकल आई। महात्मा हंसराज की एक पुस्तक से भी इस संबंध में प्रमाण मिला।

प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु आर्य जगत के एक सर्वोत्तम शोधकर्ता है। उन्होंने पुस्तक लिखी महर्षि का विषपान अमर बलिदान। इस पुस्तक तथा इससे पूर्व लिखे लेखों के आधार पर श्रीराम, लक्ष्मीदत्त दीक्षित आदि टिक न सके तो फिर अब गर्ग जी को यह विवादित कार्य फिर से आरम्म्भ करने की आवश्यकता क्यों हुई तथा इस झूठ को फिर से फैलाने का प्रयास क्यों किया गया तथा यह भी पुनः आर्य जगत में ही क्यों प्रकाशित होना आवयश्यक है। ताकि भविष्य में कोई ऐसा अनर्गल प्रलाप पुनः लाने का साहस न कर सके। ऊपर मैंने जो कुछ लिखा वह सब जिज्ञासु जी की पुस्तक के आधार पर ही लिखा है। यदि विस्तार से जानाना चाहें तो इस पुस्तक तथा प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जी द्वारा अनुवाद की गई लक्ष्मण जी वाली ऋषि जीवन का अंतिम भाग अवश्य पढ़ें। यह भी जानें कि विष किसने दिया, उसके नाम का निर्णय करना हमारा काम नहीं है, हमारा काम है कि वास्तव में विष दिया गया या नहीं। मुद्दे से न भटकते हुए विषपान तक ही सीमित रहते हुए जानें तो पता चलता है कि स्वामी जी की मृत्यु का कारण वास्तव में विषपान ही था जो जोधपुर राजघराने में एक साजिश के तहत दिया गया और इस साजिश में बहुत से लोग यहाँ तक कि अंग्रेज भी शामिल थे।

104 शिप्रा अपार्टमेन्ट कोशाम्बी,
201010 गाज़ियाबाद
दूरभाष– 01202773400,
09718528068

thearyasamaj.org

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2012-14
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2012-14
POSTED AT N.D.P.S.O. ON 23-24/7/2014
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39/57

DAV PUBLIC SCHOOL

BALLABHGARH - 121 004, FARIDABAD (HARYANA)

Telefax : 0129-2241755, 2249642 Website : www.davblb.ac.in Email : info@davblb.ac.in

ESTD 1886

INTERNATIONAL SCHOOL AWARD 2014-2017

Dedicated to Excellence

Class XII High Achievers blessed by Hon'ble President Sir

We are dedicated to promote "Results Only Work Environment" (ROWE) culture to transform young learners into competent, tech – savvy, ready to work, responsible, self – reliant and inspiring personalities marching ahead with positive attitude and confidence.

RESULT HIGHLIGHTS OF CLASS XII

Total No. of Students Appeared	-	112
Total No. of Distinctions (All Subjects)	-	385
Total No. of Students Securing above 95% (All Subjects)	-	121
Total No. of Students Securing above 90% (All subjects)	-	201
Total No. of Students Securing above 90%	-	17
Total No. of Students Securing above 75%	-	80
Total No. of Students Securing above 60%	-	105

EVERYONE IS AN ACHIEVER HERE

Monika Rathi
Science - 96%

Sonal Mittal
Commerce - 95.6%

Uttam Gupta
Science - 94.4%

Jyotsana Nagar
Science - 93.8%

Manisha Singh
Commerce - 92.8%

Nilesh Malik
Science - 92.6%

Piyush Wasan
Science - 92.6%

Mayank Gupta
Commerce - 92.4%

Umang Sarkari
Science - 92.2%

Shivam Kr. Singh
Science - 92.2%

Anjali Srivastava
Science - 92%

Vineet Garg
Commerce - 92%

Shikha Bhati
Science - 91.6%

Abhishek Chaudhary
Science - 90.4%

Vishu Adhana
Science - 90.2%

Shubham Badheria
Science - 90.2%

Mansi Jain
Science - 90.2%

Crossing the Boundaries

Attached with Tony Blair Face to Faith Foundation

DAV Ballabhgarh is involved with Face to Faith Foundation, an online learning community. We are involved in a series of Video conferencing and collaborative projects with schools all over the world.

Children's Day in Rashtrapati Bhavan

Conferred with ISA Award

Conferred with International School Award by British Council for the period 2014-17. Also received grant of £3000 by British Council, UK in partnership with UK school – St. Augustine Academy, Kent, UK towards reciprocal visit grants funding connecting class rooms project.

V.K. CHOPRA (PRINCIPAL) **DR. SATISH AHUJA** (MANAGER) **PARBODH MAHAJAN** (VICE CHAIRMAN) **PUNAM SURI** (CHAIRMAN)

मुद्रक व प्रकाशक – **श्री प्रबोध महाजन,** सभा मंत्री द्वारा **मदन गोयल** के प्रबंध में **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 से प्रकाशित। स्वामित्व – आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 (दूरभाष : 23362110, 23360059) सम्पादक – **श्री पूनम सूरी**